कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वर्ष 63 अंक : 2 पृष्ठ : 52 दिसंबर 2016 मूल्य : ₹ 22

गांवों में बुनियादी ढांचा

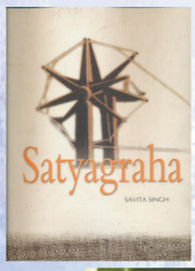

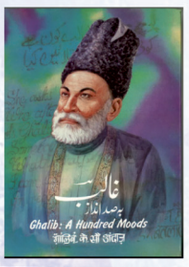

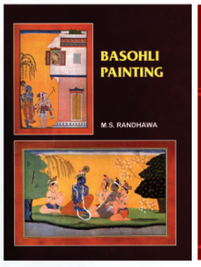

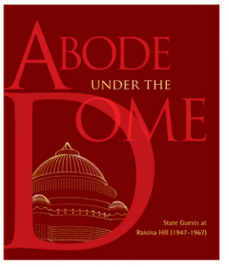

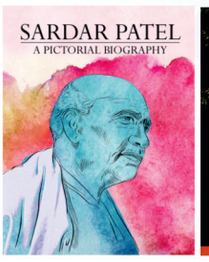

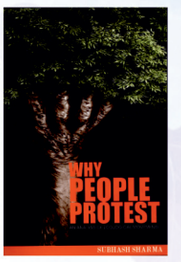

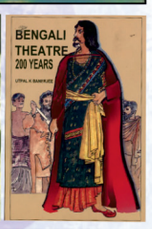

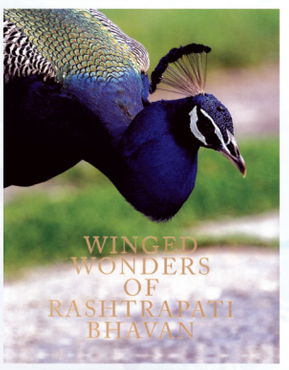

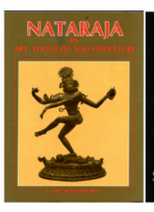

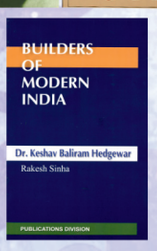

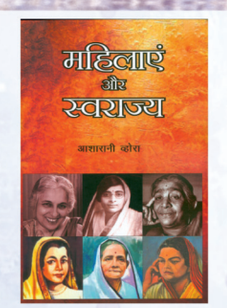

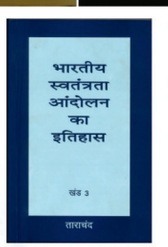

चुनी हुई पुस्तकें अब ऑनलाइन बिक्री के लिए उपलब्ध

स्वतंत्रता संग्राम, आधुनिक भारत के निर्माता, इतिहास, कला-संस्कृति, राष्ट्रपति भवन श्रृंखला और अन्य विभिन्न श्रेणियों की पुस्तकों के लिए कृपया

भारतकोष पोर्टल

https://bharatkosh.gov.in/Product

अथवा

publicationsdivision.nic.in

पर जाएं।

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

अपनी प्रतियां सुरक्षित कराने एवं व्यापार संबंधी पूछताछ के लिए कृपया संपर्क करें: 011-24369549,24362927

ई- मेल:dpdonlinebooks@gmail.com

@DPD_India

@publicationsdivision

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 63★ मासिक अंक : 2★ पृष्ठ : 52 ★ अग्रहायण–पौष 1938★ दिसंबर 2016

इस अंक में

बुनियादी सुविधाओं से बदलेगी गांवों की तस्वीर — प्रभाष कुमार झा — 5

कृषि विकास हेतु गांवों में बुनियादी सुविधाएं — महेन्द्र बोरा — 9

गांव को चाहिए एक सुदृढ़ वित्तीय ढांचा — डॉ. रहीस सिंह — 13

ढांचागत विकास से सुधर रहा है ग्रामीण स्वास्थ्य — आशुतोष कुमार सिंह — 18

ग्रामीण भारत में पेयजल की चुनौतियां — भुवन भास्कर — 22

क्या पूरा होगा घर का सपना — सतीश सिंह — 26

रफ्तार पकड़ रहा है डिजिटल आधारभूत ढांचे का विकास — बालेन्दु शर्मा दाधीच — 30

गांवों के बुनियादी विकास में पंचायतों की भूमिका — सिद्धार्थ झा — 32

गांवों में शिक्षा हेतु बुनियादी सुविधाओं का अवलोकन — प्रमोद जोशी — 36

ग्रामीण विद्युतीकरण हेतु चुनौतियां — डॉ. प्रदीप कुमार मुखर्जी — 40

नई तकनीक

अब हटेगी किसानों के चेहरे से चिंता की लकीर — किरण कुमार, भीष्म कुमार सिन्हा — 46

स्वच्छता पखवाड़ा लेखा-जोखा — --- — 48

स्वच्छता सेनानी

केवल 25 दिनों में अटरू ब्लॉक हुआ खुले में शौचमुक्त — --- — 50

प्रधान संपादक
दीपिका कच्छल
वरिष्ठ संपादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक
कमरा नं. 655, प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स,
लोधी रोड, नई दिल्ली–110 003
दूरभाष : 011–24365925
वेबसाइट : publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
विनोद कुमार मीना

व्यापार प्रबंधक
दूरभाष : 011–24367453
ई–मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण
आशा सक्सेना
सज्जा
मनोज कुमार

मूल्य एक प्रति	:	22 रुपये
विशेषांक	:	30 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	230 रुपये
द्विवार्षिक	:	430 रुपये
त्रिवार्षिक	:	610 रुपये

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रभाग, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से संपर्क करें। दूरभाष : 011–24367453

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पाठकों से आग्रह है कि कैरियर मार्गदर्शक किताबों/संस्थानों के बारे में विज्ञापनों में किए गए दावों की जांच कर लें। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय–वस्तु के लिए 'कुरुक्षेत्र' उत्तरदायी नहीं है।

संपादकीय

किसी भी देश के आर्थिक और सामाजिक विकास में गुणवत्तापूर्ण बुनियादी सुविधाओं यथा बिजली, पानी, आवास ,सड़क, स्वास्थ्य और शिक्षा की अहम् भूमिका होती है। हमारे देश की कुल जनसंख्या 1.21 अरब है जिसमें ग्रामीण आबादी 83.3 करोड़ है यानी आज भी देश की 70 प्रतिशत आबादी गांवों में बसती है। ऐसे में गांवों की समृद्धि के बिना देश के विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

भारत के गांवों में आज भी कृषि और इससे सम्बद्ध उद्योग ही आजीविका और रोजगार का मुख्य आधार है। ऐसे में किसानों की समृद्धि के बिना गांवों की उन्नति और विकास की बात करना बेमानी लगता है। सरकार भी इस बात को बखूबी समझती है इसीलिए सरकार किसानों के लिए कई नई योजनाएं लाई है जिससे न केवल पैदावार बढ़े बल्कि उसे अपनी फसल की अच्छी कीमत भी मिल सके। यही नहीं किसानों को मौसम की मार से बचाने के लिए भी सरकार नई प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना लाई है। साथ ही गांवों में सड़क, बिजली, पानी की सुविधाएं भी बढ़ाने के लिए बड़े पैमाने पर प्रयास किए जा रहे हैं।

एक अनुमान के अनुसार भारत को बुनियादी ढांचे में अंतर को पाटने के लिए अगले 10 साल में 1500 अरब डॉलर के निवेश की जरूरत है क्योंकि सरकार ने बड़े पैमाने पर आधुनिकीकरण योजना के तहत 2019 तक देश के सभी गांवों को सड़कों से जोड़ने का लक्ष्य रखा है। पर्यावरणीय रूप से अनुकूल अक्षय ऊर्जा पर विशेष जोर के साथ और अधिक मात्रा में बिजली उत्पादन का भी लक्ष्य है ताकि 2016 तुक सभी गांवों तक बिजली पहुंचाई जा सके।

अब बात करते हैं गांवों में शिक्षा की। कुछ महीने पहले प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 'मन की बात' में शिक्षा में गुणवत्ता के महत्व पर इन शब्दों में जोर दिया थाः ''अब तक सरकार का ध्यान देश भर में शिक्षा के प्रसार पर था किंतु अब वक्त आ गया है कि ध्यान शिक्षा की गुणवत्ता पर दिया जाए। अब सरकार को स्कूलिंग की बजाय ज्ञान पर अधिक ध्यान देना चाहिए।'' देशभर में प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ करने के बाद अब सरकार शिक्षा के स्तर पर ध्यान देकर अगला कदम उठाना चाहती है। इसके लिए सर्वशिक्षा अभियान के तहत आवंटन किया जाएगा और अभी तक शामिल न किए गए शेष जिलों में 62 नए नवोदय विद्यालय खोले जाएंगे।

विद्यालयों को मात्र इमारतों और कक्षाओं के रूप में ही नहीं देखा जा सकता। एक स्कूल में मूल शिक्षण स्थितियों के साथ–साथ इसमें बिजली की व्यवस्था, कार्यात्मक प्रयोगशाला और पाठनस्थल, विज्ञान प्रयोगशालाएं, कंप्यूटर प्रयोगशालाएं, शौचालय और मध्याह्न भोजन को पकाने के लिए एलपीजी कनेक्शन भी अवश्य होना चाहिए। सरकार ने सभी राज्यों और संघशासित प्रदेशों को सलाह दी है कि वह वर्तमान वर्ष में सभी माध्यमिक विद्यालयों में बिजली की व्यवस्था सुनिश्चित करें जबकि शेष विद्यालयों को एक लघु अवधि की सीमा के भीतर शामिल किया जा सकता है।

वक्त के साथ हमारा नजरिया और शिक्षा का तरीका भी बदलना जरूरी है विशेषकर ग्रामीण भारत का। इसी बात को ध्यान में रखते हुए सरकार ने ग्रामीण भारत के लिए डिजिटल साक्षरता मिशन शुरू करने की योजना बनाई ताकि अगले तीन वर्षों में करीब छह करोड़ अतिरिक्त लोगों को डिजिटल रूप से साक्षर किया जा सके। सरकार डिजिटल साक्षरता के लिए दो योजनाओं– राष्ट्रीय डिजिटल साक्षरता मिशन और डिजिटल साक्षरता अभियान को पहले ही मंजूरी दे चुकी है किंतु फिलहाल 16.8 करोड़ ग्रामीण परिवारों में से 12 करोड़ घरों में कंप्यूटर ही नहीं हैं। इनके डिजिटल तौर पर साक्षर होने की संभावना कम है। इसके लिए सरकार को बड़े पैमाने पर कदम उठाने होंगे। शिक्षा का बजट बढ़ाने के साथ–साथ शिक्षकों की कमी को भी दूर करना बेहद जरूरी है।

युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराने के लिए सरकार कई महत्वाकांक्षी योजनाएं जैसे– स्किल इंडिया, मेक इन इंडिया, प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना आदि लेकर आई है और लाखों युवा इनके अंतर्गत प्रशिक्षण भी हासिल कर चुके हैं। 'सभी को आवास' उपलब्ध हो सके, इसके लिए प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना की हाल ही में आगरा से शुरुआत की है। इस योजना के तहत सभी ग्रामीण परिवारों को वर्ष 2022 तक पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित और पक्के घर उपलब्ध कराने का प्रावधान है।

निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि देश के आर्थिक विकास और बेहतर भविष्य के लिए हमें गांवों को अच्छी गुणवत्ता की सड़कों के साथ शहरों से जोड़ना होगा, संचार व्यवस्था मजबूत करनी होगी, पीने के साफ पानी और स्वच्छता को सुनिश्चित करना होगा तथा हर व्यक्ति के पास घर हो और घर में बिजली पहुंचानी होगी। अगर हमें गांवों से विस्थापन रोकना है तो प्राथमिकता से गांवों में विकास करना होगा। हमें लोगों को गांव में ही रहने के लिए प्रोत्साहित करना होगा चूंकि गांवों में रहना आज भी न केवल सस्ता है बल्कि पर्यावरण अनुकूल होने के कारण स्वास्थ्य के लिए भी अच्छा है तथा इससे शहरों पर बोझ भी ज्यादा नहीं बढ़ेगा।

बुनियादी सुविधाओं से बदलेगी गांवों की तस्वीर

–प्रभाष कुमार झा

करीब छह लाख 41 हजार गांवों और 32.8 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले इतने बड़े मानव समूह को स्तरीय बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराना किसी भी सरकार के लिए चुनौती के साथ–साथ अवसर भी है। सरकार को भी इसका अहसास है, इसलिए उसने लक्ष्य रखा है कि वर्ष 2022 तक हर परिवार के पास पानी के कनेक्शन, शौचालय की सुविधा, चौबीस घंटे और सातों दिन बिजली की आपूर्ति समेत पक्का मकान होगा। अगर यह संभव हो पाया तो देश विकास की अग्रिम पंक्ति में विकसित देशों के साथ प्रतिस्पर्धा करता तो नजर आएगा ही, गांव और शहरों के बीच विकास के सूचकांकों का असंतुलन भी काफी हद तक कम होगा।

किसी भी देश के आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए गुणवत्तापूर्ण बुनियादी सुविधाएं– बिजली, सड़क, पानी, स्वास्थ्य और शिक्षा जरूरी हैं। भारत के संदर्भ में यह समझना जरूरी है कि अभी भी इसकी आत्मा गांवों में बसती है। इसलिए गांवों की समृद्धि के बिना देश के विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है। देश की कुल 1.21 अरब जनसंख्या में से ग्रामीण आबादी 83.3 करोड़ है। इससे साफ है कि शहरों के जबर्दस्त प्रसार और तेज गति से हो रहे औद्योगीकरण–पलायन के बावजूद दो–तिहाई से अधिक जनसंख्या गांवों में रहती है।

कृषि ज्यादातर भारतीय ग्रामीणों की आजीविका का साधन होने के साथ ही उद्यमिता और रोजगार के अवसर भी मुहैया करा रही है। एक रिपोर्ट के मुताबिक, देश के ग्रामीण इलाकों में रहने वाले 70 प्रतिशत लोग जीवनयापन के लिए परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर हैं। इसलिए अगर गांवों को समृद्ध बनाना है तो हमें बेहतर तरीके से खेतीबाड़ी की चिंता करनी पड़ेगी। केंद्र और राज्य सरकारों को यह सोचना पड़ेगा कि कैसे खेतों में बंपर पैदावार हों और तैयार फसलों को किस तरह उचित दाम पर सुगमता से बाजारों तक पहुंचाया जाए। अगर इन दो मोर्चों पर हमने मैदान मार लिया तो गांवों की खुशहाली के रास्ते खुद–ब–खुद खुल जाएंगे। अब सवाल उठता है कि इन दोनों मोर्चों पर जीत कैसे हासिल की जाए। इसका सीधा संबंध बिजली, सड़क, पानी और संचार तकनीकी से जुड़ा है। आजादी के 69 साल बाद भी परिवहन और संचार की सुविधाएं ग्रामीण विकास की राह में सबसे बड़ी बाधा बनकर खड़ी हैं। सरकार भी इन समस्याओं से भलीभांति परिचित है, इसलिए कई ऐसे भागीरथ प्रयास किए जा रहे हैं, जो समेकित ग्रामीण विकास को समर्पित हैं और इसके अच्छे परिणाम भी

सामने आ रहे हैं। नीचे हम ऐसे ही कुछ प्रयासों और उनमें व्याप्त कमियों के बारे में जानेंगे।

सांसद आदर्श ग्राम योजना

मौजूदा केंद्र सरकार ने महात्मा गांधी के सिद्धांतों और मूल्यों से प्रेरित होकर सत्ता में आने के बाद गांवों के विकास के लिए 'सांसद आदर्श ग्राम योजना (एसएजीवाई) की शुरुआत की, जिसके तहत हर सांसद पर वर्ष 2019 तक तीन गांवों में बुनियादी और संस्थागत ढांचा विकसित करने की जिम्मेदारी है। इसके बाद पांच ऐसे आदर्श गांवों (हर साल एक गांव) का चयन किया जाएगा और उनके विकास के काम को वर्ष 2024 तक अंजाम दिया जाएगा। इसका उद्देश्य गांवों में रहने वाले लोगों को उन्नत बुनियादी सुविधाएं और बेहतर अवसर मुहैया कराना है। इस योजना की संकल्पना क्रांतिकारी है और ठीक से लागू करने पर चयनित गांवों का कायापलट हो सकता है। इसके तहत चयनित गांवों में कृषि, स्वास्थ्य, साफ–सफाई, आजीविका, पर्यावरण, शिक्षा इत्यादि क्षेत्रों का एकीकृत विकास किया जाना है। अगर हर सांसद अपने पांच साल के कार्यकाल में तीन गांवों को गोद लेते हैं तो इस योजना के तहत वर्ष 2019 तक 2379 ग्राम पंचायतों का विकास किया जा सकेगा। भारत में अभी कुल 2,65,000 ग्राम पंचायत हैं। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने इसी योजना के तहत पहले दो साल के लिए अपने संसदीय क्षेत्र वाराणसी के जयापुर गांव को चुना था और आज इसकी तस्वीर बदल चुकी है। दुर्भाग्य से कई सांसदों ने इस योजना को गंभीरता से नहीं लिया और गांवों को गोद लेने की रस्म अदायगी के बाद सुध तक नहीं ली। अगर इसे गंभीरता से लिया गया होता तो दो साल बाद आज करीब 790 गावों की तकदीर बदल चुकी होती।

बिजली के क्षेत्र में सुधार

यह एक सर्वस्वीकृत तथ्य है कि बिजली मानव की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है और हर परिवार को बिजली मिलनी चाहिए। इसी ध्येय के साथ केंद्र और राज्य सरकारें बिजली के क्षेत्र में लगातार सुधार की दिशा में कदम उठा रही हैं। हालांकि, यह भी एक सत्य है कि वर्ष 2012 तक सबको बिजली उपलब्ध कराने का लक्ष्य हासिल नहीं किया जा सका। जिन गांवों तक बिजली पहुंच चुकी है, वहां भी कई घरों में बिजली कनेक्शन नहीं हैं। वर्ष 2011 की जनगणना के आंकड़े बताते हैं कि बिजली के पोल भले ही पहुंच गए हों लेकिन अभी 45 प्रतिशत ग्रामीण घरों में बिजली कनेक्शन नहीं हैं। प्रति व्यक्ति औसत बिजली खपत को किसी भी देश के विकास के एक पैमाने के तौर पर देखा जाता है। भारत में जहां प्रति व्यक्ति बिजली की खपत वर्ष 2015 में 1010 किलोवॉट/घंटा थी, वहीं चीन में यह 4000 किलोवॉट/घंटा है। विकसित देश में यह औसत तो 15000 किलोवॉट/घंटा तक है। इस अंतर को पाटना एक मुश्किल काम है और लंबे समय तक सतत प्रक्रिया से हासिल हो सकने वाला लक्ष्य है, पर सरकार भरसक प्रयास कर रही है।

केंद्र सरकार ने दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना (डीडीयूजीजेवाई) योजना शुरू की है। इस योजना का लक्ष्य गांवों में कृषि और गैर–कृषि उपभोक्ताओं के लिए अलग–अलग फीडर सुविधाओं का विकास करना है। सरकार ने वर्ष 2019 तक देश भर में सातों दिन चौबीस घंटे बिजली देने का महत्वाकांक्षी मिशन शुरू किया है। इसके लिए देश के छह लाख गांवों में से 1,25,000 गांवों को ग्रिड से जोड़ना होगा। इसके अलावा प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 15 अगस्त, 2015 को राष्ट्र के नाम अपने संबोधन में यह घोषणा की थी कि अगले 1000 दिनों में 18,452 गैर–विद्युतीकृत गांवों तक बिजली पहुंचा दी जाएगी। इसका निश्चित समयसीमा के भीतर सख्त निगरानी के साथ कार्यान्वयन किया जा रहा है। इस योजना के तहत 16 मई, 2016 तक 7766 गांवों तक बिजली पहुंच चुकी थी।

सड़क से समृद्धि का रास्ता

विश्व बैंक के एक अध्ययन में बताया गया था कि जिन ग्रामीण क्षेत्रों का संपर्क पक्की सड़कों से है, उन क्षेत्रों में सन् 2000 से 2009 के बीच आमदनी में 50 से 100 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है। विश्व बैंक की एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में सड़क निर्माण 10 लाख के निवेश पर करीब 163 लोग गरीबी से बाहर निकल जाते हैं। सड़कों की अहमियत को समझते हुए नागपुर योजना (1943–61) के तहत योजनाबद्ध तरीके से सड़कों के निर्माण की पहल की गई थी। तमाम सरकारों ने सभी श्रेणियों की सड़कों का निर्माण करके देश में सड़कों का घनत्व बढ़ाने के लिए पर्याप्त जोर दिया। इसके बावजूद सन् 2000 तक देश के 40 प्रतिशत गांवों में सभी मौसमों में चालू रहने वाली सड़कें नहीं थीं। इस वजह से भारतीय ग्रामीण आबादी के बड़े हिस्से का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था से पूरी तरह से जुड़ाव संभव नहीं हो पा रहा था। ग्रामीण विकास में सड़कों के महत्व को देखते हुए अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली तत्कालीन राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) सरकार ने 25 दिसंबर, 2000 में प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना की शुरुआत की। इसके बाद से पिछले डेढ़ दशक में जिस गति से गांवों में सड़कें बनी हैं, वह ऐतिहासिक है। इस योजना के तहत करीब 1.67 लाख बस्तियों में सभी मौसम में चालू रहने वाली साढ़े चार लाख किलोमीटर लंबी सड़क निर्माण का काम पूरा किया जा चुका है। आज भारत का कुल सड़क नेटवर्क लगभग 46 लाख किलोमीटर है, जिसमें ग्रामीण सड़कें 26 लाख किलोमीटर हैं। सड़क विकास योजना

विजन 2021 के तहत अब 100 से ज्यादा जनसंख्या वाली सभी बस्तियों को हर मौसम में चालू रहने वाली सड़क से जोड़ते हुए ग्रामीण सड़क नेटवर्क विकसित करने का लक्ष्य रखा गया है।

सड़कों से कनेक्टिविटी के जरिए आए बदलावों का एक उदाहरण यह है कि दूध संग्रह करने वाली गाड़ियां अब कई राज्यों में किसानों के दरवाजे तक पहुंचने लगी हैं। इससे लोग अब अपने गांव में ही दूध जमा करवा पा रहे हैं। पहले लोगों को अपनी पीठ पर दूध का बर्तन लादकर मेन रोड तक ले जाना पड़ता था। सड़क सुविधाओं के बेहतर होने का एक बहुत बड़ा फायदा ग्रामीण इलाकों में शिक्षा के क्षेत्र में भी हुआ है, खासकर लड़कियों के। विश्व बैंक की फीचर रिपोर्ट में जयपुर जिले के एक गांव का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि पहले बारिश होने या बहुत ज्यादा गर्मी पड़ने की स्थिति में ग्रामीण बच्चों को स्कूल नहीं जाने देते थे क्योंकि कीचड़ होने या कच्ची सड़क पर धूल भरी आंधी की वजह से शिक्षकों का भी ऐसे दिनों में स्कूल तक पहुंचना मुश्किल रहता था। अब तस्वीर बदल गई है।

बिन पानी सब सून

ग्रामीण क्षेत्रों में पीने योग्य पानी की उपलब्धता सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती रही है। देश के कई भाग विषाक्त और फ्लोराइड दूषण से प्रभावित हैं, जोकि स्वास्थ्य पर प्रभाव की दृष्टि से सबसे अधिक खतरनाक माना जाता है। जनगणना 2011 के आंकड़े बताते हैं कि केवल 30 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में नल के जरिए पानी की आपूर्ति संभव हो पाई है। बाकी क्षेत्रों में लोग पेयजल के लिए हैंडपंप, कुओं, नदियों और नहरों पर निर्भर हैं।

2022 तक हर परिवार को छत

ग्रामीण भारत में बीपीएल परिवारों को छत मुहैया कराने के लिए शुरू की गई ग्रामीण आवास योजना (इंदिरा आवास योजना) 30 साल बाद भी दीर्घकालिक वांछित लक्ष्य हासिल नहीं कर पाई। हालांकि, इसे एक उपलब्धि के तौर पर देखा जा सकता है कि वर्ष 1985 से अब तक 1,05,815.80 करोड़ रुपये की लागत से 351 लाख आवासों का निर्माण इंदिरा आवास के जरिए हो चुका है। 2011 की जनगणना के आंकड़ों के मुताबिक ग्रामीण इलाकों के 20.6 करोड़ घरों में से करीब 20.7 प्रतिशत घरों पर आज भी कच्ची छत है। सबके सिर पर छत मुहैया कराने के लिए तेजी से काम करने की जरूरत को समझते हुए मई 2014 को संसद के संयुक्त सत्र में राष्ट्रपति के अभिभाषण में सरकार ने घोषणा की कि जब तक देश स्वतंत्रता के 75 वर्ष (2022 में) पूरे करेगा, हर परिवार के पास पानी के कनेक्शन, शौचालय की सुविधा, चौबीस घंटे एवं सातों दिन बिजली की आपूर्ति समेत एक पक्का मकान होगा। इसके बाद केंद्रीय वित्त मंत्री ने 2015–16 के वार्षिक बजट को पेश करते वक्त सरकार के वर्ष 2022 तक 'सबके लिए मकान' के संकल्प को दोहराया और प्रधानमंत्री आवास योजना के तहत ग्रामीण आवास योजना को तेजी से बढ़ाने की दिशा में काम शुरू हुआ। दिल्ली और चंडीगढ़ को छोड़कर शेष भारत के ग्रामीण इलाकों में सभी बेघरों और जीर्ण–शीर्ण घरों में रहने वाले लोगों को पक्का मकान बनाने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। समतल क्षेत्रों में प्रति घर के लिए सहायता राशि बढ़ाकर 1,20,000 रुपये तक और पहाड़ी क्षेत्रों में 1,30,000 रुपये तक कर दी गई। इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे जीवन बसर करने वाले ग्रामीणों को मकान बनाने के लिए समतल क्षेत्रों में 70,000 रुपये की और पहाड़ी एवं असमतल क्षेत्रों में 75,000 रुपये की वित्तीय सहायता दी जाती थी।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी चाहते हैं कि 'सभी को आवास' का सपना जल्द से जल्द पूरा हो। इसीलिए उन्होंने प्रधानमंत्री आवास योजना की शुरुआत की है। इस योजना का उद्देश्य शहरी और ग्रामीण बेघरों को घर मुहैया कराना है, लेकिन यह घर सरकार सीधे तौर पर लाभार्थी को उपलब्ध नहीं कराएगी। इसके लिए सरकार ने ऋण एवं सब्सिडी देने का प्रावधान किया है। ऋण पर कम ब्याज दर होगी और नियमों के तहत घर बनाने पर लाभार्थी को सब्सिडी दी जाएगी। सरकार का लक्ष्य 2016–2019 तक तीन वर्षों में एक करोड़ पक्का मकान के लिए वित्तीय सहायता देने का है। लाभार्थियों की पहचान के लिए सामाजिक–आर्थिक–जातीय जनगणना का उपयोग किया जा रहा है और सहायता राशि लाभार्थियों के खाते में सीधे हस्तांतरित की जा रही है। इससे बिचौलियों और भ्रष्टाचार पर कुछ हद तक अंकुश लगने की संभावना है।

मजबूत हो शिक्षा की बुनियाद

सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के वर्ष 2014 के सर्वे बताते हैं कि भारत में 7 वर्ष और उससे अधिक उम्र के लोगों में साक्षरता दर 75 प्रतिशत थी। ग्रामीण इलाकों में साक्षरता दर 71 प्रतिशत थी, जबकि इसकी तुलना में शहरों में साक्षरता दर 86 प्रतिशत थी। प्राथमिक विद्यालय की दूरी के मामले में ग्रामीण और शहरी भारत में कोई विशेष अंतर नहीं है। करीब 99 प्रतिशत परिवारों ने बताया कि घर से दो किलोमीटर के अंदर प्राथमिक विद्यालय है। 8वें अखिल भारतीय स्कूल शिक्षा सर्वे भी इसकी पुष्टि करते हैं। इसके मुताबिक गांवों में 6.75 लाख प्राथमिक विद्यालय हैं। इसका यह अर्थ निकलता है कि देश में औसत हर गांव में कम–से–कम एक विद्यालय है। सर्वे के अनुसार 3.04 लाख उच्चतर प्राथमिक विद्यालय, 82.8 हजार

माध्यमिक विद्यालय, 37 हजार उच्चतर माध्यमिक विद्यालय और 1180 डिग्री कॉलेज ग्रामीण क्षेत्रों में चल रहे हैं। ये आंकड़े फिर भी ठीकठाक हैं, लेकिन विद्यालयों में शिक्षकों की संख्या निराश करती है। एक प्राथमिक विद्यालय में शिक्षकों की औसत संख्या 2.2 है।

कक्षाओं की संख्या, विद्यालयों में पेयजल और शौचालय की सुविधा आदि मोर्चे पर तो काफी कुछ किया जाना है। सरकार ने निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा के लिए बाल अधिकार अधिनियम 2009 बनाया, जो पहली अप्रैल 2010 से लागू है। समन्वित बाल विकास सेवा योजना (आईसीडीएसएस) के तहत 3 से 6 साल के आयु वर्ग वाले 3.5 करोड़ से ज्यादा बच्चों को आंगनवाड़ी केंद्रों में स्कूल–पूर्व शिक्षा उपलब्ध कराई जा रही है। इसके अलावा सरकार 6 से 14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा देने के लिए सर्वशिक्षा अभियान चला रही है। तमाम कमियों के बावजूद मजबूती के साथ आगे बढ़ती हमारी अर्थव्यवस्था और साक्षर युवाओं की तेजी से बढ़ती जनसंख्या एक ऐसा अवसर उपलब्ध कराते हैं, जिसकी बदौलत भारत एक मजबूत शक्ति के रूप में उभर रहा है। इसे अवसर के रूप में लेते हुए सरकार ने ग्रामीण युवाओं में कौशल के विकास के लिए दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल्य योजना की शुरुआत की है।

गांवों में इंटरनेट क्रांति

सड़क, बिजली, पानी आदि मौजूद होने पर भी आज के दौर में मोबाइल और इंटरनेट के बिना कुछ भी संभव नहीं है। गांवों के विकास की गाथा अधूरी रह जाएगी। दुनिया भर में यह स्वीकार किया गया है कि सूचना और संचार प्रौद्योगिकी गरीब और अमीर के बीच के अंतर को पाटने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। भारत में हरितक्रांति के जन्मदाता एमएस स्वामीनाथन ने भी एक बार कहा था कि सूचना तकनीक के क्षेत्र में कोशिशें भारत में सदाबहार क्रांति लाएंगी और इससे पर्यावरण को नुकसान पहुंचाए बिना ही उत्पादकता बढ़ेगी।

इसको ध्यान में रखते हुए ग्रामीण विकास मंत्रालय देश के प्रत्येक गांव में ऐसे सार्वजनिक और सामुदायिक सूचना केंद्र स्थापित कर रहा है, जहां कंप्यूटर और इंटरनेट जैसी सुविधाएं मौजूद हैं। यहां रेलवे आरक्षण से लेकर किसानों को खेती के लिए मौसम तक की जानकारी देने की पहल की जा रही है। देशभर में फैले किसान कॉल सेंटरों में किसान अब 1800–180–1551 नंबर पर फोन करके कृषि संबंधी जानकारी और अपनी समस्याओं का समाधान मुफ्त प्राप्त करते हैं। इससे कृषि की उत्पादकता व गुणवत्ता सुधरी हैं और उत्पादों की मार्केटिंग और उसके बिक्री मूल्य के निर्धारण में भी ये काफी मददगार साबित हो रही हैं। कृषि उत्पादों को एक बाजार से दूसरे बाजार तक पहुंचाने, मंडी के अनेक शुल्कों से उत्पादकों को बचाने और उचित मूल्य पर उपभोक्ता के लिए कृषि वस्तुओं को मुहैया कराने के लिए सरकार ने ऑनलाइन मंच पर राष्ट्रीय कृषि बाजार विकसित करने का एक समयबद्ध कार्यक्रम तैयार किया है। इसके लिए एक ई–प्लेटफॉर्म तैयार किया गया है, जिससे मार्च 2018 तक कुल 585 मंडियों को जोड़ा जाएगा।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं और वर्तमान में नवभारत टाइम्स ऑनलाइन में वरिष्ठ संपादक पद पर कार्यरत हैं।)

ई–मेलः prabhashjha13@gmail.com

कृषि विकास हेतु गांवों में बुनियादी सुविधाएं

–महेन्द्र बोरा

कृषिक्षेत्र अनिश्चित आय वाला क्षेत्र है, इसीलिए इसे मौसम का जुआ भी कहते हैं। फसल बरस गई तो परिवार के चेहरे पर खुशी छा जाती है और फसल बर्बाद हो गई तो मायूसी। फिर भी किसान हार नहीं मानता और अपने कर्म में लेशमात्र भी कमी नहीं करता। यदि खेतीबाड़ी के इर्द-गिर्द ऐसी सुविधाएं और सहायक काम-धंधे खड़े कर दिए जाएं जिससे ग्रामीण लोगों की आर्थिक सेहत सुधर जाए और उन्हें रात को सुकून की नींद आ जाए तो यकीन मानिए अब भी ग्रामीण जीवन की रौनक शहरों को मात दे देगी।

अक्सर यह बात कही जाती है कि भारत की आत्मा गांवों में बसती है, भारत ग्रामीण अर्थव्यवस्था प्रधान देश है, भारत कृषि प्रधान देश है, भारत की सरकार गांवों से चलती है, जय जवान–जय किसान, उत्तम खेती–मध्यम बान, आदि–आदि। ये कहावतें यूं ही नहीं बनीं। कभी ऐसा ही हुआ करता था। लेकिन आज़ादी के इन 69 सालों के सफर में हम मायावी विकास की चकाचौंध में बहुत आगे निकल गए और अपने गांव–देहात, खेत–खलिहान व खेती–किसानी की विरासत को बिसरा बैठे। यह बात तब समझ में आई जब तीन–चार साल पहले पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था घुटनों के बल बैठ गई और भारत अपने पैरों के बल खड़ा रहा, क्योंकि इसकी जड़ें तब भी उसी ग्रामीण अर्थव्यवस्था से खुराक ले रही थीं। वरना लगभग डेढ़ अरब की आबादी वाला यह देश भुखमरी का शिकार हो गया होता। बल्कि इसके उलट आज पूरी दुनिया यह मान चुकी है कि भारत सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार है। यहां अनंत संभावनाएं छिपी हैं। जाहिर–सी बात है कि वे संभावनाएं शहरी छद्म परिवेश में नहीं बल्कि ग्रामीण सरल–सहज जीवन में ही हैं। आज भी देश की 65 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती है और उसकी रोजी–रोटी का साधन खेतीबाड़ी है।

वर्ष 2011 की जनगणना के मुताबिक हमारे देश की कुल जनसंख्या 121.02 करोड़ थी। इसमें 68.84 प्रतिशत लोग गांवों में निवास करते थे और 31.16 प्रतिशत शहरों में। जबकि 1951 में हुई प्रथम जनगणना में 83 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती थी और मात्र 17 प्रतिशत शहरों में। आज़ादी के बाद इन 69 सालों में करीब 14.16 प्रतिशत लोगों ने गांव छोड़कर शहरों में पलायन कर लिया। इनमें अधिकांश वे लोग थे जिन्होंने मजबूरी में गांव छोड़ा और वे शहरों में दो वक्त की रोटी के लिए विनिर्माण क्षेत्र में दिहाड़ी मजदूर,

फैक्ट्री श्रमिक, रिक्शा चलाने वाले या घरेलू नौकर बनकर रह गए। एक अनुमान के मुताबिक वर्ष 2005 से 2012 के बीच करीब 3.7 करोड़ लोगों ने खेतीबाड़ी छोड़ दी। दुखद बात यह है कि बेहतर जिंदगी की तलाश में शहरों में आने वाले इन लोगों को और ज्यादा परेशानियों का सामना करना पड़ रहा है। बल्कि अब तो रिवर्स गियर की स्थिति आ गई है क्योंकि विनिर्माण क्षेत्र लगभग ध्वस्त हो चुका है। लोग शहरों से वापस गांवों की ओर लौटने लगे हैं।

सरकार और अर्थशास्त्री देश की तरक्की का हिसाब–किताब विकास दर के आधार पर तय करते हैं। इसलिए आज़ादी के बाद पूरा जोर औद्योगीकरण पर दिया गया ताकि अधिक से अधिक रोजगार और विकास दर हासिल की जाए। इस मशक्कत में कृषि क्षेत्र उपेक्षित रह गया। यह जानते हुए कि हमारी विशाल आबादी के बड़े हिस्से को उद्योग क्षेत्र काम नहीं दे सकता, तब भी सरकारें गंभीर नहीं हुईं। आज भी हमारी खेताबाड़ी में बड़ी–बड़ी मशीनों का काम नहीं के बराबर है और अधिकांश काम मानव–श्रम पर निर्भर करता है। इसका सीधा–सा मतलब है कि अधिकांश लोगों को कृषि क्षेत्र में रोजगार मिला है। कृषि क्षेत्र की कमी यह है कि यह अनिश्चित आय वाला क्षेत्र है, इसीलिए इसे 'मौसम का जुआ' भी कहते हैं। फसल बरस गई तो परिवार के चेहरे पर खुशी छा जाती है और फसल बर्बाद हो गई तो मायूसी। फिर भी किसान हार नहीं मानता और अपने कर्म में लेशमात्र भी कमी नहीं करता। यदि खेतीबाड़ी के इर्द–गिर्द ऐसी सुविधाएं और सहायक कामधंधे खड़े कर दिए जाएं जिससे ग्रामीण लोगों की आर्थिक सेहत सुधर जाए और उन्हें रात को सुकून की नींद आ जाए तो यकीन मानिए ग्रामीण जीवन की रौनक शहरों को मात दे देगी।

चूंकि आज भी हमारे गांव ही दिल्ली का भाग्य तय करते हैं। ग्रामीणों के वोट के बल पर ही सरकारें बनती और बिगड़ती हैं। इस बात को हमारे राजनेता बखूबी जानते और मानते हैं। फिर भी दुर्भाग्य यह है कि जो जनता सरकार में ज्यादा भागीदारी रखती है, वही आधुनिक विकास के मॉडल पर हाशिए पर चली जाती है। उसे उसका वाजिब हक नहीं दिया जाता। बजट में पैसे के बंटवारे में उसे यह कहकर उपेक्षित कर दिया जाता रहा है कि जीडीपी (सकल घरेलू उत्पादन) में इसका योगदान नहीं के बराबर है। जबकि 12–13 प्रतिशत जीडीपी वाला यही क्षेत्र देश की 60–65 प्रतिशत जनता को काम–धंधा और रोजी–रोटी दे रहा है। आखिर ऐसा विकास भी किस काम का जो अमीरी–गरीबी की खाई को और चौड़ा कर दे, शहरों और गांवों का फासला और बढ़ा दे। जब शहरों के विकास की बात की जाती है तो यह नहीं भूलना चाहिए कि एक शहर के विकास में जितना पैसा खर्च होता है उससे 100 गांवों की फिज़ा बदल सकती है। यदि गांव ही शहर बन जाएं और वहां स्वास्थ्य, शिक्षा, सड़क, बिजली, पानी, रोजगार जैसी मूलभूत जरूरतें उपलब्ध जो जाएं तो कोई भी अपना बसा–बसाया घर–बार नहीं छोड़ना चाहेगा।

यह सुखद बात है कि मौजूदा केन्द्र सरकार इस दिशा में गंभीर और प्रयत्नशील दिखाई पड़ती है। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने चुनावी सभाओं में देश के अन्नदाताओं को भरोसा दिलाते हुए कहा था कि 'मेरी सरकार किसानों के रडार पर होगी'। वे इस दिशा में प्राथमिकता के आधार पर काम करते दिखाई पड़ते हैं। सरकार ने यह मान लिया है कि जब तक देश की अधिसंख्यक जनता का कल्याण नहीं होगा तब तक देश सही मायने में तरक्की नहीं कर सकता है। शायद इसीलिए प्रधानमंत्री ने वर्ष 2022 तक किसानों की आय दुगुनी करने का लक्ष्य रखा है। उनका स्पष्ट मानना है कि विकास को वास्तविक गति यही से मिल सकती है। इसलिए कृषि और ग्रामीण विकास की वे तमाम योजनाएं जो पहले से चली आ रही थीं, उनके क्रियान्वयन में गति दिखाई पड़ती है। इसके साथ ही सरकार ने कुछ नई योजनाएं भी शुरू की हैं जिनकी ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। यहां उन योजनाओं का उल्लेख करना आवश्यक है जो कृषि क्षेत्र के लिए मील का पत्थर साबित हो सकती हैं।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना

पीएमकेएसवाई मौजूदा सरकार की भारी–भरकम राशि वाली महत्वाकांक्षी परियोजना है। इसमें पांच सालों (2015–16 से 2019–20) के लिए 50 हजार करोड़ रुपये की राशि का प्रावधान किया गया है। पहले जिस राज्य में अच्छी बारिश होती थी, उसी राज्य में अच्छी फसल हो पाती थी। नई सिंचाई योजना के तहत उन राज्यों को भी अच्छी फसल उगाने का मौका मिल सकेगा, जहां बारिश नहीं हुई यानी सिंचाई में निवेश में एकरूपता लाना इसका मुख्य उद्देश्य है। इस योजना का मुख्य नारा है– 'हर खेत को पानी'। इसके तहत कृषि योग्य क्षेत्र का विस्तार किया जाना है। खेतों में ही जल के इस्तेमाल करने की दक्षता को बढ़ाना है ताकि पानी के अपव्यय को कम किया जा सके। 'हर बूंद अधिक फसल' के उद्देश्य से सही सिंचाई और पानी बचाने की तकनीक को अपनाना है। इसके अलावा इसमें सिंचाई में निवेश को आकर्षित करने का भी प्रयास किया जाना है।

इस समय देश में कुल 14.2 करोड़ हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि में से 65 प्रतिशत में सिंचाई सुविधा नहीं है। इसलिए योजना का उद्देश्य देश के हर खेत तक किसी न किसी माध्यम से सिंचाई

सुविधा सुनिश्चित कराना है ताकि हर बूंद अधिक फसल ली जा सके। इस योजना के लिए मौजूदा वित्तवर्ष में 1000 करोड़ रुपये का बजटीय आवंटन किया गया है। इसके तहत हर खेत तक सिंचाई जल पहुंचाने के लिए योजनाएं बनाने व उनके कार्यान्वयन की प्रक्रिया में राज्यों को अधिक स्वायतत्ता व धन के इस्तेमाल की लचीली सुविधा दी गई है। इस योजना में केंद्र 75 प्रतिशत अनुदान देगा और 25 प्रतिशत खर्च राज्यों के जिम्मे होगा। पूर्वोत्तर क्षेत्र और पर्वतीय राज्यों में केंद्र का अनुदान 90 प्रतिशत तक होगा।

राष्ट्रीय ई–कृषि बाजार योजना

जुलाई 2015 में मंत्रिमंडल ने 200 करोड़ रुपये के बजट के साथ एक ऑनलाइन राष्ट्रीय कृषि बाजार की स्थापना को मंजूरी दी थी। तब से इस दिशा में तेजी से प्रयास चल रहा था और आखिर 14 अप्रैल, 2016 को प्रधानमंत्री ने इसकी घोषणा की। कृषि उत्पादों के विपणन के लिए ई–प्लेटफॉर्म की पेशकश किसानों को अपने उत्पाद बेचने के लिए अधिक विकल्प प्रदान करने के मकसद से की गई है। यह 2022 तक किसानों की आमदनी को दुगुना करने की रूपरेखा का हिस्सा है। तीन वर्षों में पूरी होने वाली इस योजना में मार्च 2018 तक देश भर के 585 थोक बाजारों को राष्ट्रीय ई–कृषि बाजार से जोड़ने का लक्ष्य रखा गया है। पहले चरण में आठ राज्यों उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, झारखंड, गुजरात, तेलंगाना और हिमाचल प्रदेश के किसान 21 थोक बिक्री बाजारों में 25 जिंसों की ऑनलाइन बिक्री कर सकेंगे। इन जिंसों में फिलहाल प्याज, आलू, सेब, गेहूं, दलहन, मोटे अनाज और कपास के अलावा कई अन्य चीजों को शामिल किया गया है। मौजूदा समय में किसान मंडियों में ही अपने उत्पादों को बेच सकते हैं जहां उन्हें कई किस्म के कर देने पड़ते हैं। ऑनलाइन कृषि बाजार से उम्मीद है कि इससे किसानों को अपने उत्पाद हाजिर मंडियों अथवा ऑनलाइन प्लेटफॉर्म दोनों स्थानों पर बेचने की सुविधा प्राप्त होगी। ऑनलाइन व्यापार तक आसानी से पहुंच के कारण किसानों की आय बढ़ेगी। खास बात यह है कि इससे उत्पादों की कीमतों में भी नरमी रहेगी।

माना जा रहा है कि इस योजना से किसान को तो भरपूर फायदा होगा ही, साथ ही थोक व्यापारियों और उपभोक्ताओं को भी फायदा होगा। यह देश की कृषि व्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए सरकार द्वारा की जाने वाली एक बड़ी पहल है। इससे किसानों को काफी राहत मिलेगी। सरकार चाहती है कृषि उत्पादों के विपणन के लिए ई–प्लेटफॉर्म की सुविधा देने से किसान अपने उत्पाद खुद बेच सकें। साझा इलैक्ट्रॉनिक मंच की खासियत यह है कि अब पूरे राज्य के लिए एक लाइसेंस होगा और एक बिंदु पर लगने वाला शुल्क होगा। मूल्य का पता लगाने के लिए इलैक्ट्रॉनिक नीलामी होगी। इसका असर यह होगा कि पूरा राज्य एक बाजार बन जाएगा और अलग–अलग बिखरे हुए बाजार खत्म हो जाएंगे। इससे किसानों के बाजार का आकार बढ़ेगा, वह अब अपने बाजार तक ही सीमित नहीं रहेगा और उसका शोषण भी नहीं हो पाएगा। उनके उत्पाद लोगों की नजरों और पहुंच में होंगे। इससे देश में किसानों की स्थिति सुधरने के साथ ही उनकी आमदनी भी दुगुनी हो जाएगी।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना

किसानों के लिए पहले भी समय–समय पर बीमा योजनाएं बनती रहती थीं, लेकिन फिर भी फसल बीमा का कुल कवरेज मात्र 23 प्रतिशत था। इसलिए पहले से चली आ रही सभी फसल बीमा योजनाओं को समाप्त करते हुए खरीफ 2016 से प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना को लागू किया गया। यह योजना अब तक की सभी फसल बीमा योजनाओं में बेहतर और किसान हितैषी मानी गई है। इस बीमा योजना से सरकार ने मौजूदा 23 फीसदी रकबे को बढ़ाकर 50 फीसदी करने का लक्ष्य रखा है। इसकी खूबी यह है कि फसल की बुआई से लेकर कटाई और उपज को खलिहान तक लाने का जोखिम इसमें शामिल किया गया है। यानी उपज जब तक किसान के घर नहीं पहुंच जाती तब तक यदि किसी भी स्थिति में फसल को कोई नुकसान होता है तो किसान को बीमा का पूरा लाभ मिलेगा। इस प्रकार इसमें जोखिम के सभी पहलुओं को ध्यान में रखा गया है। इसमें किसान द्वारा देय प्रीमियम की राशि को बहुत कम किया गया है। यह खरीफ फसल के लिए 2 प्रतिशत, रबी के लिए 1.5 प्रतिशत और वार्षिक वाणिज्यिक और बागवानी फसलों के लिए अधिकतम 5 प्रतिशत तय की गई है। बाकी का प्रीमियम 50–50 प्रतिशत केन्द्र और राज्य सरकारें देंगी। कम से कम 25 प्रतिशत क्लेम राशि सीधे किसान के खाते में जाएगी और बाकी की राशि भी 90 दिनों के अंदर दे दी जाएगी। इस योजना पर साल में 17,600 करोड़ रुपये खर्च आने का अनुमान है। इसमें 8,800 करोड़ रुपये केन्द्र सरकार देगी और इतनी ही राशि राज्य सरकार।

इस योजना में यदि बीमित किसान प्राकृतिक आपदा के कारण बोनी नहीं कर पाता तो यह जोखिम भी शामिल किया गया है। इसमें ओला, जलभराव और लैण्ड स्लाइड जैसी आपदाओं को स्थानीय आपदा माना गया है। पुरानी योजनाओं के अंतर्गत यदि किसान के खेत में जलभराव होता था तो किसान को मिलने वाली दावा राशि इस बात पर निर्भर करती कि यूनिट आफ इंश्योरेंस (गांव या गांवों के समूह) में कुल

नुकसान कितना है। इस कारण कई बार नदी–नाले के किनारे या निचले स्थल में स्थित खेतों में नुकसान के बावजूद किसानों को दावा राशि प्राप्त नहीं होती थी। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना में इसे स्थानीय हानि मानकर केवल प्रभावित किसानों का सर्वे कर उन्हें दावा राशि प्रदान की जाएगी। इस योजना की एक खूबी यह भी है कि इसमें पोस्ट हार्वेस्ट जोखिम भी शामिल है। फसल कटने के बाद 14 दिन तक यदि फसल खेत में है और उस दौरान कोई आपदा आ जाती है तो किसान को दावा राशि प्राप्त हो सकेगी।

इस नई फसल बीमा योजना में यह दावा किया जा रहा है कि जोखिम वाली खेती अब पूरी तरह सुरक्षित हो जाएगी। इसका ज्यादा फायदा पूर्वी उत्तर प्रदेश, बुंदेलखंड, विदर्भ, मराठवाड़ा और तटीय क्षेत्रों के किसानों को मिलेगा। भारतीय कृषि बीमा कंपनी लिमिटेड के साथ निजी बीमा कंपनियां इस योजना का क्रियान्वयन कर रही हैं।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना

19 फरवरी, 2015 को प्रधानमंत्री द्वारा शुरू की गई इस योजना का उद्देश्य अगले तीन साल में 14 करोड़ से अधिक किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड उपलब्ध कराना है। यानी हर किसान को एक मृदा स्वास्थ्य कार्ड देना है। इस महत्वाकांक्षी योजना की घोषणा 2014 में वित्तमंत्री अरूण जेटली ने बजट भाषण में की थी। बजट में कार्ड जारी करने के लिए 100 करोड़ रुपये तथा 100 मोबाइल मृदा परीक्षण प्रयोगशालाएं स्थापित करने के लिए 56 करोड़ रुपये आवंटित किए गए थे। दरअसल इस कार्ड में किसी खेत विशेष की मृदा का ब्यौरा होगा कि उसमें कौन–कौन से पोषक तत्व किस–किस मात्रा में हैं और उसमें बोई गई फसलों को किस मात्रा में कौन–सा उर्वरक दिया जाना चाहिए। इस योजना का ध्येय वाक्य 'स्वस्थ धरा, खेत हरा' रखा गया है। इस योजना के तहत मिट्टी का परीक्षण कराना और उसी के अनुसार आवश्यक वैज्ञानिक तौर–तरीके अपनाकर मृदा के पोषण तत्वों की कमियों को दूर किया जाना है। इसका उद्देश्य मिट्टी की कमजोर पड़ती गुणवत्ता को रोकना और कृषि पैदावार को बढ़ाना है। इस योजना के तहत अगले तीन साल में देश के सभी 14.5 करोड़ किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड देने का लक्ष्य रखा गया है।

इसके अलावा जो महत्वपूर्ण योजनाएं कृषि क्षेत्र और पूरे ग्रामीण परिवेश को सशक्त बनाने के लिए बुनियाद का काम कर रही हैं उनमें राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय बागवानी मिशन, दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना (डीडीयूजीजेवाई), प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना, दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल्य योजना (डीडीयू–जीकेवाई), सांसद आदर्श ग्राम योजना, श्यामा प्रसाद मुखर्जी रुर्बन मिशन (एनआरयूएम), आदि प्रमुख हैं।

निःसंदेह गांवों में विकास का बुनियादी ढांचा खड़ा करने में वर्तमान सरकार की योजनाएं सराहनीय हैं। सवाल यह है कि उन्हें किस ईमानदारी के साथ धरातल पर उतारा जाता है। जरूरत इस बात की भी है कि इसके समानांतर मॉनीटरिंग का एक ढांचा भी खड़ा किया जाए, जिसका काम यह सुनिश्चित करना हो कि केन्द्र से जो पैसा कृषि विकास के नाम पर खेत तक आ रहा है वह शत–प्रतिशत विकास के काम पर ही खर्च हो रहा है। कभी पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी जी ने कहा था कि केन्द्र से जो पैसा गांवों के विकास के लिए जाता है उसका 15 प्रतिशत भी वास्तव में गांवों में खर्च नहीं होता। अब वक्त आ गया है कि इस लचर व्यवस्था को दुरुस्त किया जाए और भारत के नव–निर्माण में ठोस पहल की जाए। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि देश की उन्नति का रास्ता खेत से ही शुरू होता है।

(लेखक 'कृषि चौपाल' पत्रिका के संपादक हैं।)
ई–मेल : krishichaupal.mag@gmail.com

पत्रिकाओं के शुल्क की नई दरें

क्रम सं.	पत्रिका का नाम	एक प्रति का मूल्य	विशेषांक का मूल्य	वार्षिक शुल्क	द्विवार्षिक शुल्क	त्रिवार्षिक शुल्क
1.	योजना	22	30	230	430	610
2.	कुरुक्षेत्र	22	30	230	430	610
3.	आजकल	22	30	230	430	610
4.	बालभारती	15	20	160	300	420
5.	रोजगार समाचार	12	–	530	1000	1400

गांव को चाहिए एक सुदृढ़ वित्तीय ढांचा

–डॉ. रहीस सिंह

सर हेनरी मेनियो मैकॉफ ने ग्राम समुदाय को 'लघु गणतंत्र' के समान बताते हुए कहा है कि यह बाह्य संबंधों से बिल्कुल पृथक और विभिन्न राजनीतिक फेरबदल के बावजूद अपरिवर्तित रहा। उनका यह भी कहना है कि ग्रामीण समुदाय के लोगों का जीवन एक-दूसरे पर निर्भर था। वास्तव में भारतीय ग्राम समुदाय एक 'लघु गणतंत्र' (टिनी रिपब्लिक) की भांति था क्योंकि यह उन सभी शर्तों को पूरा कर रहा था जो एक गणतंत्र के लिए अनिवार्य मानी जाती हैं, जैसे आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था, प्रशासन और न्याय। धीरे-धीरे यह पारम्परिक व्यवस्था विनष्ट हुई जिसके फलस्वरूप भारतीय गांव अपनी हैसियत खो बैठे। शायद अब तक गांव अपनी पुनर्प्रतिष्ठा की राह देख रहे हैं। सवाल यह उठता है कि क्या यह सम्भव हो पाएगा? इसके लिए सुगम राह कहां से होकर जाएगी-ग्राम्य शासन से या ग्राम्य वित्त से अथवा संयुक्त रूप से दोनों से ही? गांधीजी कहते थे कि भारतीय किसान में फूहड़पन के बाहरी आवरण के पीछे युगों पुरानी संस्कृति छिपी पड़ी है। इस बाहरी आवरण को अलग कर दें, उसकी दीर्घकालीन गरीबी और निरक्षरता को हटा दें, तो हमें सुसंस्कृत, सभ्य और आज़ाद नागरिक का एक सुंदर से सुंदर प्रतिरूप मिल जाएगा। लेकिन क्या इसके लिए गांव के पास आधारभूत ढांचा और विज़न है?

ग्रामीण विकास से जुड़ी एक रिपोर्ट (भारत ग्रामीण विकास रिपोर्ट 2012–13) कहती है कि ग्रामीण भारत बहुत व्यापक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। इस परिवर्तन के विवरण 'ग्रामीण पुनरुत्थान' की उत्साहजनक कहानियों और ग्रामीण उपयोग के तेजी से बढ़ते विस्तार से लेकर कृषि संबंधी अत्यधिक संकटों तथा बड़ी संख्या में किसानों द्वारा की जाने वाली आत्महत्याओं तक विस्तृत हैं। हम सुनते हैं कि भारतीय ग्रामीण बड़ी कार्पोरेट कम्पनियों द्वारा अपनी भूमि के अधिग्रहण को लेकर संघर्ष कर रहे हैं और ग्रामीण उग्रता 'आंतरिक सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा' बन गई है। समकालीन ग्रामीण भारत वास्तव में बहुत जटिल है, जिसमें परिवर्तन की कई नई शक्तियां कार्य कर रही हैं और यह किसी भी एक श्रेणी के अंतर्गत पूरी तरह से नहीं आती। इसलिए गांवों को समझना, उनके समक्ष उपजी चुनौतियों तथा संभावनाओं की गहराई से खोज करना जरूरी है। इस दिशा में आगे बढ़ने से पहले यह जानना जरूरी होगा कि ग्रामीण भारत का तात्पर्य क्या है? दरअसल भारत में 'ग्रामीण' को परिभाषित करते समय सुविधानुसार यह कह दिया जाता है कि वह 'जो शहरी नहीं है', तकनीकी पक्ष जो भी हो। भारत के 69 प्रतिशत यानी 83.3 करोड़ लोग ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। इस ग्रामीण जनसंख्या की वृद्धि दर में 1991–2001 के 1.7 प्रतिशत प्रतिवर्ष की तुलना में 2010–2011 में 1.2 प्रतिशत प्रतिवर्ष की उल्लेखनीय गिरावट आई है (जनगणना 1991; 2001; 2011)। इसके अतिरिक्त एक विशेषता और भी है। ग्रामीण विकास रिपोर्ट के अनुसार एक ओर कुछ सुदूर और एकाकी टोलों समेत लगभग 2,20,000 गांवों में 500 से कम लोग थे वहीं 54 प्रतिशत से अधिक ग्रामीण लोग 2000 से अधिक जनसंख्या वाले 18,768 गांवों में रहते थे (जनगणना 2011)। इस तरह से तेजी से नया स्वरूप धारण करते गांवों में विकास के कुछ उत्साहजनक ध्रुव बन गए हैं, जो संघटित रूप से शहरी केन्द्रों से जुड़े हैं और कई तरह के व्यवसायों के पोषक हैं। जेंडर भूमिकाओं

माइक्रोफाइनेंस व्यवस्था एवं ग्रामीण विकास

माइक्रोफाइनेंस को लागू करने के पीछे प्रमुख विचार समावेशी विकास और ग्रामीण उत्थान के लिए वित्तीय सुविधाएं उपलब्ध कराना था। कारण यह कि वहां तक बैंकिंग की पहुंच नहीं थी और न ही पारंपरिक वित्तीय सेवाएं उचित तरह से काम कर रही थीं। पिछले दो दशकों से सरकार, गैर–सरकारी संगठन (एनजीओ) तथा बैंकिंग संस्थान समानांतर प्रयासों के जरिए इस क्षेत्र के विकास में अपनी–अपनी स्पष्ट भूमिका निभाने का प्रयास कर रहे हैं।

उल्लेखनीय है कि माइक्रोफाइनेंस को लघु–स्तरीय वित्तीय सेवाओं के लिए उपयोग किया जाता है। इसके अंतर्गत ऋण तथा बचत दोनों ही प्रकार की सेवाएं आती हैं, जो शहरी एवं ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों के गरीबों के उत्थान के लिए हैं। इस प्रकार से माइक्रोफाइनेंस आर्थिक सेवाओं में जोखिम कम करने, बचत एवं आत्म–सशक्तिकरण को बढ़ाने का कार्य करता है। माइक्रोफाइनेंस आधारित ऋण वितरण तंत्र, एक निरंतर आधार पर विकासात्मक गतिविधियों से न्यायसंगत लाभ जैसे मुद्दों का समाधान एवं सेवाएं सुनिश्चित करता है। राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) भारत में माइक्रोफाइनेंस को प्रोत्साहित करने में अग्रणी है। इसके स्व–सहायता समूह मॉडल ने वाणिज्यिक बैंकों को गरीबों के लिए ऋण निर्माण के लिए प्रेरित किया है। इससे स्वैच्छिक एजेंसियों, बैंक, सामाजिक रूप से उत्साही व्यक्तियों, अन्य औपचारिक एवं अनौपचारिक संस्थाओं तथा सरकारी–तंत्र को स्वयंसहायता समूहों और माइक्रोफाइनेंस संस्थाओं को प्रोत्साहन देने का अवसर प्राप्त हुआ है। माइक्रोफाइनेंस संस्थाएं स्वयंसहायता समूहों, व्यक्तियों, सामाजिक संस्थाओं तथा गैर–सरकारी संगठनों (एनजीओ) के माध्यम से कार्य करती हैं। भारत में प्रमुख माइक्रोफाइनेंस संस्थाओं में कुछ इस प्रकार हैं– आगा खां माइक्रोफाइनेंस एजेंसी; एपीएमएएस : आंध्रप्रदेश महिला अभिवृद्धि सोसायटी; आईएफएमआर : माइक्रोफाइनेंस केंद्र; भारतीय माइक्रोफाइनेंस स्वयंसहायता समूह परिसंघ नेटवर्क; मैसूर रिसेटलमेंट एवं विकास एजेंसी; नवभारत जागृति केंद्र; प्रदन : विकास कार्य के लिए व्यावसायिक सहायता; सधन : सामुदायिक वित्त विकास संस्थान प्राधिकरण; सर्वोदय माइक्रोफाइनैंस; सेवा : स्व–सहायता महिला संघ; एसकेएस भारत : स्वयं कृषि संगम; कामकाजी महिला फोरम, मद्रास आदि।

गैर–सरकारी संगठन (एनजीओ)

इस समय भारत में लगभग सक्रिय सूचीबद्ध एनजीओ की संख्या एक रिपोर्ट के मुताबिक 33 लाख के आसपास है। महाराष्ट्र एनजीओ के मामले में सबसे आगे है जहां लगभग 4.8 लाख एनजीओ सक्रिय हैं। दूसरे स्थान पर आंध्रप्रदेश है, जहां 4.6 लाख एनजीओ हैं। उत्तर प्रदेश में 4.3 लाख, केरल में 3.3 लाख, कर्नाटक में 1.9 लाख, गुजरात व पश्चिम बंगाल में 1.7–1.7 लाख, तमिलनाडु में 1.4 लाख, उड़ीसा में 1.3 लाख तथा राजस्थान में एक लाख एनजीओ सक्रिय हैं। इसी प्रकार से अन्य राज्यों में भी इनकी बड़ी तादाद है। आर्थिक दृष्टि से देखें तो भारत में प्रतिवर्ष सभी एनजीओ मिलकर 40 हजार से लेकर 80 हजार करोड़ रुपये तक जुटा लेते हैं, जिसमें सबसे बड़ा हिस्सा सरकार का होता है। उल्लेखनीय है कि ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में सामाजिक क्षेत्र के लिए 18 हजार करोड़ रुपये का बजट रखा गया था। ग्रामीण क्षेत्र में एनजीओ की भूमिका बहुआयामी रूप में देखी गई है। जैसे–कृषि, डेयरी उत्पादन, सामाजिक उत्थान, महिला सशक्तीकरण, डिजिटल सम्बद्धता प्रोत्साहन, अधिसंरचनात्मक विकास, ग्रामीण कौशल प्रशिक्षण, स्वरोजगार प्रशिक्षण आदि।

कपार्ट की भूमिका

भारत के ग्रामीण विकास में स्वयंसेवी क्षेत्र की महत्वपूर्ण भूमिका है, जो समुदाय और व्यक्तियों के बीच बदलाव की पहल और विशिष्ट मुद्दों के प्रत्यक्ष कार्यान्वयन के जरिए कार्य करता है। लोक कार्यक्रम और ग्रामीण प्रौद्योगिकी विकास परिषद की सप्तम योजना के प्रस्तुतीकरण में स्वयंसेवी क्षेत्र की संस्थाओं को औपचारिक पहचान मिली 1986 में क्योंकि तब ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में सहायक सरकारी तथा स्वयंसेवी क्षेत्र के संगठनों के बीच सहायक समितियों के वर्गीकरण तथा सामंजस्य के लिए सहयोग किया गया। कपार्ट की स्थापना दो एजेंसियों को मिलाकर हुई थी– 'काउंसिल फॉर एडवांसमेंट ऑफ रूरल टेक्नोलॉजी' (सीएआरटी) तथा पीपल्स एक्शन फॉर डेवलपमेंट (इंडिया) (पीएडीआई)। कपार्ट भारत में ग्रामीण विकास को विस्तार देने में बड़ा योगदान करती है, जिसके कार्यक्रमों में योजना, जनसहयोग, ग्रामीण प्रौद्योगिकी, लाभार्थी संगठन (ओबी), निःशक्तता कार्रवाई, विपणन विकास, युवा उद्यमी (वाईपी), प्रधानमंत्री ग्रामीण विकास फेलोज योजना आदि शामिल हैं। इससे संबंधित प्रमुख बिंदु हैं–

1. ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी विकास योजनाओं के कार्यान्वयन में स्वयंसेवी संगठनों को सहयोग देना।
2. उचित ग्रामीण तकनीकी विकास योजनाओं के लिए राष्ट्रीय नोडल प्वाइंट के रूप में कार्य करना।
3. स्वयंसेवी क्षेत्र के संगठनों की क्षमता निर्माण तथा ग्रामीण समुदायों द्वारा ग्रामीण विकास में भाग लेने वाले स्वयंसेवी संगठनों को सहयोग और पुरस्कार देना।
4. विकास के लिए सामुदायिक कार्यविधियां उपलब्ध कराना।
5. महत्वपूर्ण विकास विषयों पर ज्ञान का निर्माण कराना ग्रामीण–स्तर के जनसमूहों व संगठनों का निर्माण तथा सशक्तीकरण।
6. प्राकृतिक संसाधनों और वातावरण को सुरक्षित रखना तथा पुनर्निर्मित करना।
7. निःशक्तों तथा लाभ से वंचित महिलाओं व अन्य जनसमूहों को विकास कार्यक्रम में भाग लेने के योग्य बनाना।

में आ रहे बदलाव नई विश्व व्यवस्था के नए चिह्नों के साथी बन रहे हैं। हाल के आंकड़े बताते हैं कि 2009–10 और 2011–12 के बीच ग्रामीण प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय में प्रतिवर्ष 5.5 प्रतिशत की त्वरित वृद्धि हुई है (केंद्रीय सांख्यिकी संगठन)। बढ़ती क्रयशक्ति के कारण ही अब ग्रामीण बाजार अवशिष्ट खुदरा बाजार नहीं रह गया। लेकिन ग्रामीण भारत में असमानता और संपत्ति का असमान वितरण कठिन चुनौतियां पैदा कर रहा है। इसके लिए जिम्मेदार कारक हैं– खेती का विखंडीकरण और ग्रामीण वित्तीय जटिलताएं और अनुपलब्धता।

यदि ग्रामीण वित्तीय संरचना संबंधी अध्ययनों पर ध्यान दें तो मुख्य रूप से 5 मुख्य घटक नजर आते हैं– बचतकर्ता, उधारग्राही, बिचौलिया, वित्तीय प्रपत्र, विधिक फ्रेमवर्क। प्रथम श्रेणी के अंतर्गत मध्यम और उच्च श्रेणी के किसान आते हैं जो अधिशेष उत्पादन करते हैं। ये अधिशेष उत्पादन कर बचतों का निर्माण करते हैं जिनकी बचतें या तो घरों में सुरक्षित होती हैं अथवा स्थानीय–स्तर पर संचालित होने वाली औपचारिक अथवा अनौपचारिक ऐजेंसियों में। लेकिन यदि अधिशेषों का आकार बड़ा होता है तो उनसे होने वाली बचतें बैंकों में ही जमा होती हैं विशेषकर कोऑपरेटिव, वाणिज्यिक अथवा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में। अपनी बचतों की जमाओं हेतु एजेंसियों का चुनाव बचतकर्ता सुलभता (एक्सिसबिलिटी), उपलब्धता, उपयुक्तता और साख के आधार पर करता है। उधारग्राही की श्रेणी में किसान, शिल्पकार और मजदूर आता है। किसान इसे 'फाइनेंसिंग इनपुट' के रूप में प्राप्त करता हैं क्योंकि वह इसका खेती में टिकाऊ सम्पतियों (ड्यूरेबल असेट्स) में निवेश करता है। कभी–कभी इस प्रकार की उधारी कृषि भिन्न उत्पादन उद्देश्यों के लिए भी ली जाती है। यहां पर एक बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि ग्रामीण क्षेत्र में उत्पादन और निवेश ऋण औपचारिक एजेंसियों में उपलब्ध होता है लेकिन उपभोग ऋण (कंजप्शन लोन) के लिए मुख्य स्रोत अनौपचारिक एजेंसियां ही रहती हैं। कारण यह है कि औपचारिक एजेंसियां समर्थक ऋणधार (कोलैटरल सिक्योरिटी) मांगती हैं जबकि अनौपचारिक एजेंसियां मौखिक या लिखित गारंटी पर ही ऋणराशि प्रदान कर देती हैं। भारत में अनिश्चित मानसून और इसके साथ ही 'रेन फेड एरिया' का अधिक होना जोखिम की संभावनाएं बढ़ाता रहता है। इस दशा में चूंकि औपचारिक एजेंसियां लगभग नाकाम हो जाती हैं, स्वाभाविक है कि किसान के लिए पुनः अनौपचारिक एजेंसियों का ही सहारा रह जाता है। जहां तक ग्रामीण वित्त संरचना में बिचौलियों का एक संस्था के रूप में स्थापित होने का प्रश्न है तो यह ग्रामीण वित्तीय कार्य–संरचना में एक महत्वपूर्ण घटक है। सामान्य तौर पर यह वर्ग दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है अर्थात औपचारिक एवं अनौपचारिक। प्रथम के अंतर्गत ऐसे ऋण प्रदाता आते हैं जो व्यक्तिगत संबंधों के आधार पर वैयक्तिक ऋण–प्रदान करते हैं। इस प्रकार की ऋण राशि छोटी होती है लेकिन ब्याज दरें अपेक्षाकृत बहुत ज्यादा होती हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो इस प्रकार के ऋणों पर गैर–ब्याज मूल्यदेयता बहुत ऊंची होती है। औपचारिक एजेंसियों की श्रेणियों में कोऑपरेटिव संस्थाएं (जिनमें पीएसीएस यानी पुअरेस्ट एरियाज सिविल सोसाइटी, डीसीसीबीएस, कमोडिटी कोऑपरिटव.....आदि शामिल होती हैं), क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक एवं वाणिज्यिक बैंकों को शामिल किया जा सकता है। सामान्य तौर पर छोटे किसान औपचारिक ऋण व्यवस्था से दूर ही रहते हैं। इसका कारण इन ऋणों पर आने वाली लागत (कॉस्ट) नहीं बल्कि इनसे जुड़ी शर्तें होती हैं जिनका समाधान तमाम सरकारी प्रयासों के बावजूद नहीं हो पाया है। वैसे औपचारिक एजेंसियों की भी अपनी कुछ समस्याएं होती हैं जो उनकी ग्रामीण वित्त संरचना में सक्रियता को कम करती हैं, जैसे–ऋण व्यवस्था से जुड़े सख्त नियम, सुलभता (एक्सेसबिलिटी), नियत समय आधारित परिचालन (फिक्स्ड टाइम ऑफ ऑपरेशन), लचीलेपन में कमी और प्रक्रियागत जटिलता (प्रोसीजरल कॉम्प्लेक्सिटी)।

ग्रामीण वित्त की आपूर्ति के लिए जो ऋण व्यवस्था चलन में है, उसमें आवधिक दृष्टि से भिन्नता है। आवधिक दृष्टि से ऋणों को लघु अवधि, मध्यम और दीर्घावधि में विभक्त किया जा सकता है। लघु अवधि के लिए ऋण छोटी जरूरतों हेतु प्रदान किया जाता है। इस प्रकार के ऋण केवल फसल कटने या उठने तक होते हैं। इन्हें 'तकावी' ऋण भी कह सकते हैं जिनका उपयोग बीज व उर्वरक खरीदने तथा दूसरे खर्चों को पूरा करने में किया जाता है। मध्यम अवधि वाले ऋण सामान्यतया 5 वर्ष तक के लिए होते हैं जिनका उद्देश्य भूमि सुधार, कृषि मशीनों एवं उपकरणों की खरीद तथा सिंचाई प्रबंधन हेतु निवेश के रूप में होता है। दीर्घावधि वाले ऋण 5 वर्षों से अधिक समय के लिए होते हैं जिनका प्रयोग बुनियादी आर्थिक संरचना में विकास के लिए किया जाता है।

संस्थात्मक संरचना के आधार पर 'ग्रामीण वित्त' को गैर–संस्थागत एवं संस्थागत वित्त में विभाजित किया जा सकता है। भारत में ग्रामीण वित्त व्यवस्था में गैर–संस्थागत वित्त आज भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कुछ अध्ययन रिपोर्टों के अनुसार भारत में कुल वित्त का लगभग 40 प्रतिशत वित्त गैर–संस्थागत वित्त है। संस्थागत ग्रामीण वित्तीय संस्थाओं में कोऑपरेटिव बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सूक्ष्म वित्त संस्थान (माइक्रो फाइनेंस इंस्टीट्यूशंस), वाणिज्यिक बैंक आदि आते हैं। भारत में ग्रामीण वित्त के लिए कोऑपरेटिव बैंक सबसे पुरानी एवं वृहद संस्था है, जो त्रि–स्तरीय अधःसंरचना के जरिए ग्रामीण विकास में योगदान देता है। इस संरचना में सबसे निचले स्तर पर प्राथमिक कृषि

वित्त सोसाइटियों का गठन किया गया है जो केवल उत्पादक कार्यों के लिए ही ऋण उपलब्ध कराती हैं। इनका मूल उद्देश्य पूंजी एकत्रित करना तथा अपने सदस्यों को निम्न दर पर आवश्यक ऋण उपलब्ध कराना है। उल्लेखनीय है कि एक गांव अथवा क्षेत्र के कोई भी 10 व्यक्ति मिलकर एक प्राथमिक सहकारी/साख समिति का निर्माण कर सकते हैं। कुछ अध्ययनों के अनुसार भारत में 95 प्रतिशत ग्रामों तक इन सोसाइटियों की पहुंच है। इसके बाद जिला अथवा केन्द्रीय को–ऑपरेटिव बैंक आता है जिसका कार्य राज्य सहकारी बैंक से ऋण लेकर अपनी चालू पूंजी में वृद्धि कर सहकारी समितियों को 1 से 3 वर्ष के लिए ऋण उपलब्ध कराना होता है। इस प्रकार जिला कोऑपरेटिव बैंक, राज्य सहकारी बैंक एवं प्राथमिक सहकारी समितियों के बीच सेतु का कार्य करता है। सबसे ऊपर राज्य कोऑपरेटिव बैंक होता है जो केन्द्रीय बैंक, प्राथमिक कृषि वित्त सोसाइटी की गतिविधियों को नियंत्रित व समन्वित करता है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना ग्रामीण वित्त निर्माण की तरफ एक और बड़ा कदम माना जा सकता है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य दूरदराज के ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधा पहुंचाना, कमजोर वर्गों के लिए रियायती दर पर ऋण उपलब्ध कराना, ग्रामीण बचतों को जुटाकर उत्पादक गतिविधियों में लगाना है। 2 अक्तूबर, 1975 में स्थापित क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की आरम्भिक गतिविधियां काफी तेज रहीं और अगले 12 वर्षों में 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना हुई। वर्तमान समय में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखाएं, व्यावसायिक बैकों की कुल शाखाओं के लगभग 43 प्रतिशत के बराबर हैं लेकिन इनका कुल ग्रामीण ऋण में हिस्सा बहुत कम है। वर्ष 1987 तक इन बैंकों की संख्या में वृद्धि हुई लेकिन केलकर समिति की सिफारिश पर 1987 के बाद से कोई भी नया क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थापित नहीं किया गया। सितंबर 2005 तक 196 ग्रामीण बैंक काम कर रहे थे जबकि जनवरी 2013 के अनुसार इनकी स्थिति 67 है। 9 अप्रैल, 2012 की भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी अधिसूचना के अंतर्गत क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की धनराशियों के ऑनलाइन ट्रांसफर करने की सुविधा दी गई है। बैंकों को केन्द्रीयकृत भुगतान प्रणाली से जोड़ा गया है जिससे ये रियल टाइम ग्रास सेटेलमेंट सिस्टम (आरटीजीएस) व नेशनल इलेक्ट्रॉनिक फंड ट्रांसफर (एनईएफटी) के जरिए धनराशियों को एक खाते से दूसरे खाते में ट्रांसफर कर सकें। इसके साथ ही क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पूंजी आधार को बढ़ाने तथा एकीकरण व विलयनीकरण का तरीका भी प्रयुक्त किया गया।

भूमि विकास बैंक दीर्घावधिक ग्रामीण वित्त प्रदान करने में निर्णायक भूमिका में रहा है। हालांकि यह पूर्ण बैंक नहीं है और यह मांग जमाएं स्वीकार नहीं करता। दीर्घावधिक वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति, जैसे–भूमि खरीदने, भूमि पर स्थायी प्रबंधन करने तथा पुराने ऋणों के भुगतान आदि के लिए भूमिबंधक रखकर ऋण प्रदान करता है। सामान्यतया इन बैंकों का ढांचा द्विस्तरीय होता है– राज्य–स्तरीय केंद्रीय भूमि विकास बैंक तथा जिला अथवा ताल्लुका स्तर पर प्राथमिक भूमि विकास बैंक। हालांकि कुछ राज्यों में, जैसे जम्मू–कश्मीर तथा उत्तर प्रदेश में यह ढांचा ऐकिक ही है, जहां शीर्षस्थ भूमि विकास बैंक है, जो जिला–स्तर पर स्वयं अपनी शाखाओं द्वारा सीधे ही अपनी गतिविधियां सम्पन्न करता है। इस बैंक के पूंजी के मुख्य स्रोत हैं–अंश पूंजी, सुरक्षित कोष, जमाराशि, ऋणपत्र तथा ऋण। ऋणपत्र सबसे महत्वपूर्ण स्रोत माना जाता है क्योंकि इससे ही भूमि विकास बैंक अपनी अधिकांश कार्यशील पूंजी एकत्रित करते हैं। इन बैंकों के ऋणपत्रों (दीर्घावधिक) में मुख्य रूप से भारतीय रिजर्व बैंक, व्यापारिक बैंक, सहकारी बैंक, जीवन बीमा निगम तथा केन्द्र व राज्य सरकारें निवेश करती हैं।

माइक्रो फाइनेंस संस्थान ग्रामीण वित्त के क्षेत्र में अहम माने जा सकते हैं जो उन लोगों को वित्त उपलब्ध कराते हैं जो कानूनी बारीकियों, तथा तकनीकी कारणों के चलते वाणिज्यिक बैंकों तथा अन्य वित्तप्रदाता संस्थाओं का लाभ उठा पाने में असमर्थ रहते हैं। 1975 के बाद से कुछ गैर–सरकारी संस्थाओं ने गरीबों के लिए ऋण की वैकल्पिक व्यवस्था करनी शुरू कर दी थी। बाद में भारतीय रिजर्व बैंक, नाबार्ड ने वाणिज्यिक बैंकों को एनजीओ के साथ मिलकर गरीबों के लिए स्वयंसहायता समूह बनाने के लिए प्रोत्साहित किया। 'माइक्रो फाइनेंस इंस्टीट्यूशंस (डेवलपमेंट एंड रेगुलेशन) बिल 2012 के अधिनियम बनने के बाद इसे विनियमित करने की अधिक शक्तियां भारतीय रिजर्व बैंक को प्राप्त हो गईं। आरबीआई ने स्वयंसहायता समूहों को दिए जाने वाले ऋण को प्राथमिक उधारी में शामिल किया। इस प्रकार से भारत में साधनहीन लोगों को ऋण उपलब्ध कराने के साथ–साथ उनके आर्थिक सशक्तीकरण में माइक्रोफाइनेंस यानी सूक्ष्म वित्त संस्थाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कुछ अर्थशास्त्रियों ने यहां तक माना कि जिस तरह से देश को दूध के मामले में आत्मनिर्भर बनाने में ऑपरेशन फ्लड की भूमिका रही है, उसी प्रकार से ऋण सेवा को लोगों तक पहुंचाने में सूक्ष्म वित्त संस्थाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारतीय रिजर्व बैंक ने भी माइक्रो फाइनेंस संस्थाओं के इस कार्य को सराहा है लेकिन अब पिछले कुछ समय से माइक्रो फाइनेंस संस्थाओं के सामाजिक और आर्थिक लक्ष्यों के बीच की लकीर पतली होने की आशंका बढ़ती जा रही है। यहां यह ध्यान रखने की बात है कि माइक्रो फाइनेंस कंपनियों की ब्याज दरें काफी ऊंची हैं। माइक्रो फाइनेंस संस्थानों

अर्थव्यवस्था में इसका एक बड़ा हिस्सा होता है)।

इस सबके साथ एक अंतिम पक्ष रह जाता है ग्रामीण वित्तपोषण करने वाली संस्थाओं के वित्तपोषण का। उल्लेखनीय है कि औपचारिक एजेंसियों की मदद के लिए नाबार्ड और सिडबी जैसी वित्तपोषण संस्थाएं हैं जो ग्रामीण भारत में सुनिश्चित गतिविधियों/कार्यक्रमों के वित्तपोषण हेतु उन्हें पुनर्वित्त प्रदान करती हैं। भारतीय रिजर्व बैंक इनके लिए नियामक संस्था की भूमिका में रहता है। भारतीय रिजर्व बैंक ऋण फंडों की मांग तथा पूर्ति को मौद्रिक नीति द्वारा विनियमित करता है एवं विकास आधारित लक्ष्यों को हासिल करने के लिए साख के प्रवाह को निर्देशित करता है। ग्रामीण वित्त से जुड़े वित्तीय प्रपत्रों में प्रतिज्ञा, प्रकल्प, बंधक, प्रॉमिसरी नोट तथा ऐसी प्रतिभूतियां जिनमें ऋण पत्र शामिल होते हैं, आदि को शामिल किया जा सकता है। उल्लेखनीय है कि इस नियामकीय व्यवस्था में अनौपचारिक ऋण प्रदाताओं (मनी लेंडर्स) को राज्य सरकार द्वारा नियंत्रित किया जाता है जबकि औपचारिक वित्तीय संस्थानों का नियंत्रण भारतीय रिजर्व बैंक के हाथ में होता है।

के कामकाज के संबंध में सिफारिशें देने के लिए गठित मालेगाम समिति ने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि माइक्रो फाइनेंस संस्थानों द्वारा अपने ऋणों पर ली जाने वाली ब्याज दरें 24 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। साथ ही इस समिति ने माइक्रो फाइनेंस संस्थानों के लिए गैर–बैंकिंग वित्तीय कंपनियों की एक अलग श्रेणी एनबीएफसी–एमएफआई बनाने की सिफारिश की थी। चूंकि जिन स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से छोटे कर्ज बांटे जाते हैं, वे कर्जदारों के आसपास ही सक्रिय होते हैं। इसलिए डिफॉल्ट का दायरा बेहद कम होता है। जब जोखिमरहित ऐसा बाजार मौजूद हो तो व्यापारिक हितों से प्रेरित कंपनियों के इसमें घुसने की संभावना बढ़ जाती है। सिडबी, नाबार्ड जैसे सामाजिक बैंक और आईएफएस तथा केएफडब्ल्यू जैसी फंडिंग एजेंसियां माइक्रो फाइनेंस उद्योग में बड़े पैमाने पर निवेश करना चाहती हैं। यहां तक कि प्राइवेट इक्विटी कंपनियां भी विशाल बाजार और ऊंचे रिटर्न को देखकर इसमें निवेश करने की इच्छा रखती हैं। यही कारण है कि माइक्रो फाइनेंस कम्पनियों के लिए उनके सामाजिक और आर्थिक लक्ष्य में संतुलन बनाने की जरूरत महसूस की जा रही है।

इस प्रकार से ग्रामीण भारत में वाणिज्यिक बैंकों सहित समस्त औपचारिक संस्थाओं एवं अनौपचारिक संस्थाओं को मिलाकर ग्रामीण वित्त बाजार (आरएफएम) महत्वपूर्ण संरचना ग्रहण करता है। इस तरह से ग्रामीण वित्त बाजार सही अर्थों में भारतीय वित्त बाजार का एक उपसमुच्चय (सबसेट) प्रतीत होता है जो ग्रामीण क्षेत्र में फंड आपूर्तिकर्ताओं और फंड यूजर्स के मध्य निरंतर लिंकेज प्रदान करता है। इसमें ग्रामीण अर्थव्यवस्था से जुड़े सभी ट्रांजेक्शंस शामिल होते हैं, विशेषकर करेंसी के रूप में वित्तीय प्रपत्र, बैंक जमाएं, ऋण, बंधक (मार्गेज), सरकारी एवं अन्य ब्रांड, कार्पोरेट प्रतिभूतियां आदि (इसमें गैर–मौद्रिक लेन–देनों को भी शामिल किया जा सकता है क्योंकि ग्रामीण

फिलहाल 73वें संविधान संशोधन के बाद से तीसरी सरकार का अभ्युदय हुआ, लेकिन अभी तक उसे वित्तीय स्वायत्तता प्राप्त नहीं हो सकी। परिणाम यह हुआ कि ग्रामीण विकास काफी हद तक '3एफ' (फंड, फंक्शन एवं फंक्शनरीज) में उलझकर रहा गया। इस उलझाव के कारण ही अन्य 'एफ' यानी ग्रामीण विकास का 'फ्रेमवर्क' अभी तक संतुलित एवं प्रगतिशील स्थिति को प्राप्त नहीं कर सका। यही वजह है कि ग्राम अभी भी पुराने रिपब्लिक की सी हैसियत प्राप्त करने की बाट जोह रहे हैं। लिओनेल कार्टिस ने भारत के गांवों का वर्णन करते हुए उन्हें 'घूरे का ढेर' कहा था लेकिन राष्ट्रपिता महात्मा गांधी 'उन्हें आदर्श बस्तियों' में बदलना चाहते थे। अभी भी गांधीजी की यह अभिलाषा/आकांक्षा इतिहास के पन्नों तक सीमित है और इसकी दो बड़ी वजहें हैं–प्रथम, ग्रामीण जड़ता और द्वितीय, कमजोर वित्तीय संरचना।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं। उन्होंने आर्थिक, सामाजिक और ऐतिहासिक विषयों पर अनेक पुस्तकें लिखी हैं।)

ई–मेल : raheessingh@gmail.com

ढांचागत विकास से सुधर रहा है ग्रामीण स्वास्थ्य

–आशुतोष कुमार सिंह

मानव स्वभावतः स्वस्थ रहना चाहता है। कई बार परिस्थितियां ऐसी बनती हैं कि वह अपने शरीर को स्वस्थ नहीं रख पाता। भारत जैसे देश में लोगों को बीमार करने वाली और लंबे समय तक उन्हें बीमार बनाए रखने वाली परिस्थितियों की लंबी–चौड़ी सूची है। लेकिन इन सभी सूचियों में एक मुख्य कारण है अर्थाभाव। यानी भारत के लोग धनाभाव में अपना इलाज व्यवस्थित तरीके से नहीं करवा पाते हैं। या यूं कहे कि स्वास्थ्य के क्षेत्र में समुचित ढांचे के अभाव में वह अपना इलाज नहीं करवा पाते। ऐसे में जरूरी है कि हम ग्रामीण भारत में स्वास्थ्य ढांचे का विकास और तेजी से करें।

1951 की जनगणना के समय जहां भारत की आबादी 38.1 करोड़ थी वहीं 2001–11 के दस वर्षों में 18.1 करोड़ जनसंख्या बढ़ी है। भारत के 121 करोड़ लोगों में से 83.3 (68.84:) करोड़ लोग ग्रामीण क्षेत्र में रहते हैं जबकि 37.7 करोड़ (31.16:) शहरी क्षेत्रों में रहते हैं।

जबसे मानव की उत्पत्ति हुई है तभी से खुद को स्वस्थ रखने की जिम्मेदारी मानव पर रही है। बदलते समय के साथ–साथ स्वास्थ्य की चुनौतियां भी बदलती रही हैं। वर्तमान में किसी भी राष्ट्र के लिए सबसे बड़ी चुनौती है राष्ट्र की जनसंख्या के अनुपात में स्वास्थ्य सुविधाओं को मुहैया कराना। इस समस्या से हम भारतीय भी अछूते नहीं हैं।

यदि हम भारत की बात करें तो 2011 की जनगणना के हिसाब से 1 मार्च, 2011 तक भारत की जनसंख्या का आंकड़ा 1 अरब 21 करोड़ तक पहुंच चुका था व निरंतर इसमें बढ़ोतरी हो रही है। हालांकि जनसंख्या की औसत वार्षिक घातीय वृद्धि दर तेजी से गिर रही है। वर्ष 1981–91 में यह 2.14 फीसदी, 1991–2001 में 1.97 फीसदी थी वहीं 2001–11 में यह 1.64 फीसदी है। बावजूद इसके जनसंख्या का यह दबाव भारत सरकार के लिए स्वास्थ्य सुविधाओं की व्यवस्थित व्यवस्था करने में बड़ी मुश्किलों को पैदा कर रहा है।

2013 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार, वर्ष 2011 तक देश में 1 लाख 76 हजार 8 सौ 20 सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र (ब्लॉक स्तर), प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र और उप–केंद्र स्थापित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त देश में 11 हजार 493 सरकारी अस्पताल हैं और 27 हजार 339 आयुष केंद्र। देश में (आधुनिक प्रणाली के) 9 लाख 22 हजार 177 डॉक्टर हैं। नर्सों की संख्या 18 लाख 94 हजार 968 बताई गई है।

भारत में दस हजार जनसंख्या पर औसतन 7 फीजिशियन हैं, वहीं दक्षिण–पूर्व एशिया में यह प्रतिशत 5.9 है। नर्सों के मामले में भी दक्षिण–पूर्व एशिया के बाकी देशों से भारत की स्थिति ठीक है। भारत में जहां पर दस हजार जनसंख्या पर औसतन 17.1 नर्स और आया हैं वहीं दक्षिण–पूर्व एशिया क्षेत्र में यह औसत 15.3 फीसदी है।

ग्रामीण भारत की स्वास्थ्य स्थिति

ग्रामीण भारत की बात की जाए तो वहां की स्थिति कुछ और ही हैं। यहां ज्यादातर आबादी के स्वास्थ्य का दारोमदार उप–स्वास्थ्य केंद्रों पर ही निर्भर करता है। 2015 में हुए राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्वेक्षण के आंकड़े देखें तो पता चलता है कि पिछले 10 वर्षों में उप–स्वास्थ्य केंद्रों की संख्या में मामूली इजाफा हुआ है। 2005 में इनकी संख्या जहां 146026 थी वहीं 2015 में यह संख्या बढ़कर 153655 तक पहुंची है। आंकड़ों के हिसाब से देखें तो 2005 में सरकारी मकानों में 63901 उपकेंद्र चल रहे थे वहीं 2015 में बढ़कर 103632 हो गए। यानी इन केंद्रों को अपना मकान मिल गया। 2005 में जहां 50338 उप–स्वास्थ्य केंद्र किराये पर चल रहे थे 2015 आते–आते उनकी संख्या घटकर 32879 रह गई वहीं पंचायत बिल्डिंग में 2005 में जहां 14295 उप–स्वास्थ्य केंद्र चलाए जा रहे थे वहीं 2015 में मामूली बढ़त के साथ इनकी संख्या 17090 हो गई है। इसे ठीक से समझने के लिए ग्राफ–1 देखें।

पूरे देश के उपकेंद्रों की बात की जाए तो इसे राज्यवार

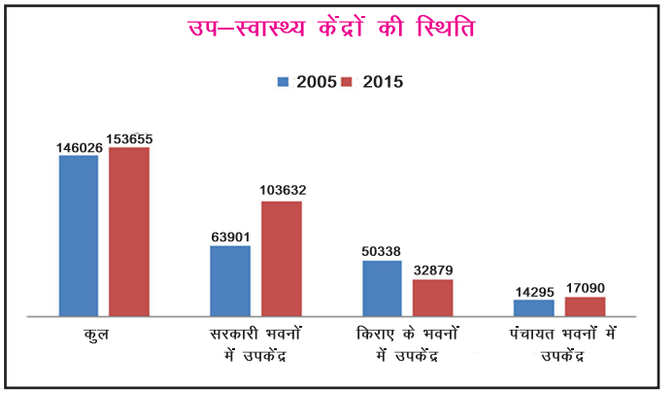

स्रोतः राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्वेक्षण–2015 ग्राफ–1

तालिका 1 उप–स्वास्थ्य केंद्रों की राज्यवार स्थिति 2005 और 2015 का अवलोकन

राज्य	2005			2015			
	कुल	सरकारी मकान	किराए का मकान	पंचायत	कुल	सरकारी मकान	किराए का मकान
आंध्रप्रदेश	12522	4221	8301	0	7659	1972	5687
अरुणाचल प्रदेश	379	NA	NA	NA	286	286	0
असम	5109	2637	2472	0	4621	3570	920
बिहार	10337	NA	NA	NA	9729	4184	5545
छत्तीसगढ़	3818	1458	0	2360	5186	3557	355
गोवा	172	40	132	0	209	46	163
गुजरात	7274	5554	0	1720	8063	5177	345
हरियाणा	2433	1499	0	934	2569	1631	225
हिमाचल प्रदेश	2068	1262	14	792	2065	1388	20
जम्मू और कश्मीर	1879	NA	NA	NA	2265	924	1341
झारखंड	4462	NA	NA	NA	3957	2147	895
कर्नाटक	8143	4460	2893	790	9264	7328	1399
केरल	5094	2986	1098	1010	4575	2249	860
मध्यप्रदेश	8874	3996	4878	0	9192	7903	703
महाराष्ट्र	10453	6527	1098	2828	10580	8578	588
मणिपुर	420	216	131	73	421	350	71
मेघालय	401	391	10	0	428	410	6
मिजोरम	366	366	0	0	370	370	0
नगालैंड	394	NA	NA	NA	396	338	4
उड़ीसा	5927	2542	3385	0	6688	3621	2784
पंजाब	2858	1443	0	1415	2951	1829	0
राजस्थान	10512	8211	0	2301	14407	10221	200
सिक्किम	147	108	31	8	147	142	5
तमिलनाडु	8682	6510	2172	0	8706	6665	1705
तेलंगाना	NA	NA	NA		4863	2425	2438
त्रिपुरा	539	278	202	59	1017	781	86
उत्तराखंड	1576	562	1014	0	1848	1198	643
उत्तर प्रदेश	20521	6494	14027	0	20521	17219	3302
पश्चिम बंगाल	10356	1923	8433	0	10357	6918	2570
अंडमान व निकोबार	107	107	0	0	122	122	0
चंडीगढ़	13	8	0	5	16	5	0
दादर एवं नगर हवेली	38	38	0	0	56	45	1
दमन एवं दीव	21	20	1	0	26	19	5
दिल्ली	41	NA	NA	NA	27	6	7
लक्षद्वीप	14	8	6	0	14	8	6
पुडूचेरी	76	36	40	0	54	NA	NA
संपूर्ण भारत	**146026**	**63901**	**50338**	**14295**	**153655**	**103632**	**32879**

स्रोतः राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्वेक्षण–2015

समझना होगा। इसके लिए नीचे तालिका–1 में यह बताया गया है कि पिछले 10 वर्षों में सभी राज्यों में उप–स्वास्थ्य केंद्रों की क्या स्थिति रही है।

भारतीय स्वास्थ्य के ढांचे को और विस्तार देंगे तो सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों को भी जानना जरूरी है। साथ ही, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की मौजूदा स्थिति का अवलोकन भी जरूरी है। इस लिहाज से तालिका–2 बहुत उपयोगी है। इसके अनुसार 2014 में जहां उप–स्वास्थ्य केंद्रों की संख्या 152326 थी, बढ़कर 2015 में 153655 हो गई है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की संख्या 25020 से बढ़कर 25308 हो गई है। सामुदायिक केंद्रों की संख्या 5363 से बढ़कर 5396 पर जा पहुंची है। कहने का मतलब यह है कि धीरे–धीरे स्वास्थ्य क्षेत्र का ढांचागत विकास हो रहा है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत ढांचागत प्रगति

भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के स्वास्थ्य की जब हम बात करते हैं तो राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम) के तहत होने वाली प्रगति का अवलोकन जरूरी हो जाता है।

मानव संसाधनों का संवर्धन

एनआरएचएम ने 10,027 मेडिकल अफसरों, 4023 विशेषज्ञों, 78,168 एएनएम, 53,456 स्टाफ नर्सों, 35,514 आयुष डॉक्टरों आदि को अनुबंध आधार पर भर्ती किया है यानी 2.3 लाख अतिरिक्त स्वास्थ्य मानव संसाधनों को मंजूरी देकर मानव संसाधनों की कमी को पूरा करने का काम किया गया है। इतना ही नहीं एनआरएचएम ने आपातकालीन प्रसूति देखभाल, जीवन रक्षा एनेस्थीसिया कौशल, लेप्रोस्कोपिक सर्जरी में एमबीबीएस डॉक्टरों को ट्रेनिंग दी गई है ताकि निचले स्तर पर डॉक्टरों की कमी को पूर्ण किया जा सके।

तालिका 2– राज्यवार स्वास्थ्य ढांचागत विकास (मार्च 2014–मार्च 2015)

राज्य	2014			2015		
	उप–स्वास्थ्य केंद्र	प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र	सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र	उप–स्वास्थ्य केंद्र	प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र	सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र
आंध्रप्रदेश	12522	1709	292	7659	1069	179
अरुणाचल प्रदेश	286	117	52	286	117	52
असम	4621	1014	151	4621	1014	151
बिहार	9729	1883	70	9729	1883	70
छत्तीसगढ़	5161	783	157	5186	792	155
गोवा	207	21	4	209	21	4
गुजरात	7274	1158	300	8063	1247	320
हरियाणा	2542	454	109	2569	461	109
हिमाचल प्रदेश	2068	489	78	2065	500	78
जम्मू और कश्मीर	2265	637	84	2265	637	84
झारखंड	3958	330	188	3957	327	188
कर्नाटक	9264	2233	193	9264	2353	206
केरल	4575	829	224	4575	827	222
मध्य प्रदेश	8764	1157	334	9192	1171	334
महाराष्ट्र	10580	1811	360	10580	1811	360
मणिपुर	421	85	17	421	85	17
मेघालय	422	108	27	428	110	27
मिजोरम	370	57	9	370	57	9
नगालैंड	396	126	21	396	128	21
उड़ीसा	6688	1305	377	6688	1305	377
पंजाब	2951	427	150	2951	427	150
राजस्थान	14407	2082	567	14407	2083	568
सिक्किम	147	24	2	147	24	2
तमिलनाडु	8706	1369	385	8706	1372	385
तेलंगाना				4863	668	114
त्रिपुरा	972	84	18	1017	91	20
उत्तराखंड	1847	257	59	1848	257	59
उत्तर प्रदेश	20521	3497	773	20521	3497	773
पश्चिम बंगाल	10356	909	347	10357	909	347
अंडमान व निकोबार	119	22	4	122	22	4
चंडीगढ़	16	0	2	16	0	2
दादर एवं नगर हवेली	51	7	1	56	7	1
दमन एवं दीव	26	3	2	26	3	2
दिल्ली	27	5	0	27	5	0
लक्षद्वीप	14	4	3	14	4	3
पुडूचेरी	53	24	3	54	24	3
संपूर्ण भारत	**152326**	**25020**	**5363**	**153655**	**25308**	**5396**

स्रोतः राष्ट्रीय स्वास्थ्य सर्वेक्षण–2015

मान्यता प्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता (आशा)

एनएचआरएम के कार्यान्वयन के ढांचे के अधीन एक महिला समुदाय स्वास्थ्य कार्यकर्ता जिसे 'आशा' के रूप में जाना जाता है, उनकी नियुक्ति प्रत्येक गांव में 1000 जनसंख्या पर एक आशा या जनजातीय क्षेत्र में एक बस्ती पर एक आशा के आधार पर की जाती है। जून, 2015 तक पूरे देश में 9.15 लाख आशा और लिंक कार्यकर्ताओं का चयन किया जा चुका था।

ढांचागत विकास पर बल

एनआरएचएम के उद्देश्य सभी स्तरों पर सार्वजनिक स्वास्थ्य डिलीवरी प्रणाली को मजबूत बनाना है। पिछले 10 वर्षों के दौरान (जून 2015 तक) एससी, पीएचसी, सीएचसी, एसडीएच और डीएच सहित विभिन्न स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए 30,750 नए निर्माण और 32,847 नवीकरणीय उन्नयन परियोजनाओं को मंजूरी दी गई।

24X7 सेवाएं और प्रथम रेफरल सुविधाएं

प्रथम रेफरल यूनिट के रूप में कार्य करने के 2,706 रेफरल अस्पतालों को मजबूत बनाया गया। 24X7 सेवाएं प्रदान करने के लिए 13,667 पीएचसी, सीएचसी, 14,441 नवजात देखभाल केंद्र, (एनबीसीसी), 575 विशेष नवजात देखभाल इकाइयों और 2,020 नवजात स्थिरीकरण इकाइयां एनएचएम के तहत स्थापित की गई।

मोबाइल चिकित्सा इकाइयां (एमएमयू)

सबसे दूरस्थ और दुर्गम क्षेत्रों तक सेवाएं प्रदान करने के लिए राज्यों में मोबाइल मेडिकल यूनिट मदद कर रही हैं। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के

10 वर्षों में, 672 जिलों में से 333 को एमएमयू से सुसज्जित किया गया है। अभी तक देश में 1,107 एमएमयू कार्यरत हैं।

आयुष को मुख्यधारा में लाना

10042 पीएससी, 2732 सीएचसी, 501 डीएच और 5714 स्वास्थ्य सेवाओं को आयुष की सुविधाओं में आवंटित करके 'आयुष' को मुख्यधारा में लाया गया है। समुदाय भागीदारी पर भी विशेष ध्यान दिया गया है। एनआरएचएम का एक मुख्य उद्देश्य स्वास्थ्य क्षेत्र में सार्वजनिक व्यय को बढ़ाना है। इसके उपयोग में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है। एनआरएचएम ने अभी तक राज्यों को 1,34,137.31 करोड़ रुपये जारी किए हैं। नवजात शिशु मृत्युदर जो 1990 में 80 थी, वह 2013 में घटकर 40 हो गई है। कुल जनन दर (टीएफआर) जो 1990 में 3.8 थी, वह 2013 में घटकर 2.3 हो गई।

मातृ और शिशु ट्रेकिंग प्रणाली

यह एक नाम आधारित प्रणाली है जो भारत सरकार द्वारा स्वास्थ्य देखभाल सेवा उपलब्ध करने वाली प्रणाली में सुधार लाने और निगरानी कार्यप्रणाली को मजबूत बनाने में सूचना प्रौद्योगिकी के नवाचार अनुप्रयोग के रूप में शुरू की गई है। इस योजना के तहत 2015–16 के दौरान कुल 1,18,68,505 गर्भवती महिलाओं को पंजीकृत किया गया। इसी प्रकार अक्तूबर, 2015 तक इस योजना के तहत पांच वर्ष के कम आयु के 82,38,820 बच्चों को पंजीकृत किया गया। एमसीटीएफसी राष्ट्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण संस्थान द्वारा परिचालित की गई है और 80 हेल्प डेस्क द्वारा परिचालित है। इस योजना को नीचे तक ले जाना बहुत जरूरी है ताकि ग्रामीण स्वास्थ्य की स्थिति बेहतर की जा सके।

आयुष की ढांचागत स्थिति

वर्तमान में देश में आयुष क्षेत्र के तहत बुनियादी ढांचे में 62649 बिस्तरों की क्षमता के साथ 3277 अस्पतालों, 24289 औषधालयों, 495 अंडर ग्रेजुएट कॉलेजों, 106 स्नातकोत्तर विभागों वाले कॉलेज और देश में भारतीय चिकित्सा पद्धति और होम्योपैथी के 785185 पंजीकृत चिकित्सक हैं। परंतु दुख की बात यह है कि सरकार ही आयुर्वेद व होम्योपैथी के डाक्टरों के साथ भेदभाव करती है। आयुर्वेद के डाक्टरों को शल्य चिकित्सा यानी कि ऑपरेशन करने की छूट नहीं है। हालांकि आयुर्वेद में शल्य चिकित्सा का विशद् वर्णन है और इसका काफी गौरवपूर्ण इतिहास भी रहा है। माना जाता है कि सुश्रुत मस्तिष्क का ऑपरेशन करने वाले दुनिया के पहले चिकित्सक थे। इस पर भी अंग्रेजी सरकार ने देश की परतंत्रता के कालखंड में आयुर्वेद पर विभिन्न प्रकार के प्रतिबंध लगा रखे थे जो आज भी यथावत् चले आ रहे हैं।

इन देशज प्रणालियों की ओर सरकार का ध्यान स्वाधीनता मिलने के 17 वर्ष बाद 1964 में गया था जबकि पहली स्वास्थ्य नीति 1952 में ही बनी थी। 1964 में सरकार ने आयुर्वेदिक औषधालय खोलने का निर्णय लिया था, परंतु इसकी चाल इतनी धीमी थी कि वर्ष 2007 तक केवल 31 औषधालय ही खोले गए थे। हालांकि इस क्षेत्र में कितनी अधिक संभावनाएं थी, इसका पता केवल इस एक बात से लगाया जा सकता है कि आज देश में 24289 औषधालय हैं और वह भी न्यूनतम बजट के बावजूद। इसके बाद भी आयुर्वेद जैसी भारतीय चिकित्सा पद्धतियों में शिक्षण, प्रशिक्षण, शोध, विकास और इनके अस्पतालों की स्थापना पर सरकार का ध्यान 1995 में गया यानी कि स्वाधीनता से पूरे 48 वर्ष बाद। मार्च 1995 में स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के तहत भारतीय चिकित्सा पद्धति एवं होम्योपैथी विभाग की रचना की गई और बाद में वर्ष 2003 में इसका नाम बदल कर आयुर्वेद, योग व प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी विभाग (आयुष) कर दिया गया। हालांकि सिद्ध और यूनानी जैसी पद्धतियां काफी कम ही प्रचलित हैं, परंतु इससे सरकार का ध्यान आयुर्वेद की ओर से कम ही हो गया। आयुष की स्थापना के बावजूद यह सब लंबे समय तक सरकारी दिखावा ही बना रहा। हजारों करोड़ के स्वास्थ्य मंत्रालय के बजट में से आयुष को केवल कुछ सौ करोड़ रुपये ही मिलते रहे हैं। इतना ही नहीं, ऐलोपैथी के शोध, शिक्षण आदि के लिए भी इससे कहीं अधिक रुपये दिए जाते रहे हैं।

निष्कर्ष

राष्ट्र के विकास को मापने का उत्तम मानक वहां का स्वस्थ समाज होता है। नागरिकों के स्वास्थ्य का सीधा असर उनकी कार्यशक्ति पर पड़ता है। नागरिक कार्यशक्ति का सीधा संबंध राष्ट्रीय उत्पादन शक्ति से है। जिस देश की उत्पादन शक्ति मजबूत है वह वैश्विक–स्तर पर विकास के नए–नए मानक गढ़ने में सफल होता रहा है। इस संदर्भ में यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी भी राष्ट्र के विकास में वहां के नागरिक स्वास्थ्य का बेहतर होना बहुत ही जरूरी है। शायद यही कारण है कि अमेरिका जैसे वैभवशाली राष्ट्र की राजनीतिक हलचल में स्वास्थ्य का मसला अपना अहम स्थान पाता है। दरअसल किसी भी राष्ट्र के लिए अपने नागरिकों के स्वास्थ्य की रक्षा करना पहला धर्म होता है। ऐसे में यह जरूरी हो जाता है कि हम अपने राष्ट्र की सेहत को बेहतर रखें। इसके लिए जरूरी है कि आपका स्वास्थ्य ढांचा बेहतर हो।

(लेखक स्वस्थ भारत अभियान से जुड़े हैं। सामाजिक मुद्दों और स्वास्थ्य पर प्रतिष्ठित पत्र–पत्रिकाओं में लिखते रहते हैं।)

ई–मेल : forhealthyindis@gmail.com

ग्रामीण भारत में पेयजल की चुनौतियां

–भुवन भास्कर

गांवों में पीने के पानी की समस्या को तीन हिस्सों में देखा जाना चाहिए। एक तो भूजल का गिरता स्तर, दूसरा पीने लायक साफ पानी की आपूर्ति का अभाव और तीसरा, उपलब्ध पानी की गुणवत्ता। ग्रामीण भारत में विद्यमान पेयजल संकट को दूर करने के लिए हमें इन्हीं तीन समस्याओं पर काम करना होगा, जिनकी पहचान हमने ऊपर के हिस्से में की है। भूजल के गिरते स्तर को रोककर उसे बढ़ाने का उपाय करना, उपलब्ध पानी को रिहायशी इलाकों के अंदर हैंडपंप या पाइप के जरिए पहुंचाना, जहां से लोगों को 24 घंटे आसानी से पानी मिल सके और ऐसी जगहों पर जहां भूजल में रासायनिक संक्रमण है, या पानी खारा है, वहां उसका उपचार (ट्रीट) कर पाइप के जरिए घरों में पहुंचाने की व्यवस्था करना। इन तीनों बिंदुओं पर एक साथ प्रभावी तरीके से काम करके ही ग्रामीण भारत की प्यास को बुझाया जा सकता है और कई बीमारियों और अकाल मौतों से बचा जा सकता है।

देश के ग्रामीण क्षेत्रों में पीने का पानी उपलब्ध कराना आजादी के बाद से ही तमाम सरकारों के लिए चुनौती रहा है। और शायद इसी चुनौती को भांपते हुए संविधान निर्माताओं ने संविधान की धारा 47 के तहत साफ पीने योग्य पानी उपलब्ध कराने को बाकायदा राज्य के दायित्वों में शामिल किया। अपनी संवैधानिक जिम्मेदारियों के अनुकूल स्वतंत्र भारत की सरकारों ने इस दिशा में ध्यान भी दिया और 10वीं पंचवर्षीय योजना तक साफ पीने का पानी मुहैया कराने के मद में 1,105 अरब रुपये खर्च किए जा चुके थे। इसकी शुरुआत 1949 में हुई जब 40 वर्षों के भीतर 90 प्रतिशत जनसंख्या को साफ पीने का पानी उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया। इसके ठीक दो दशक बाद 1969 में यूनिसेफ की तकनीकी मदद से करीब 255 करोड़ रुपये खर्च कर 12 लाख बोरवेल खोदे गए और पाइप से पानी आपूर्ति की 17,000 योजनाएं शुरू की गईं। इसके अगले दो दशकों में सरकार ने एक्सीलरेटेड वाटर सप्लाई प्रोग्राम (एआरडब्ल्यूएसपी), अंर्तराष्ट्रीय पेयजल और स्वच्छता दशक के तहत सभी गांवों को पीने का पानी उपलब्ध कराने के लिए एक शीर्ष समिति का निर्माण, राष्ट्रीय पेयजल मिशन (एनडीडब्ल्यूएम) और 1987 की राष्ट्रीय जल नीति के रूप में कई नीतिगत हस्तक्षेप किए। इसके बाद के वर्षों में कई योजनाओं के तहत पहले की नीतियों और कार्यक्रमों को व्यापक स्वरूप दिया गया और इनमें जनता की भागीदारी सुनिश्चित करने की कोशिश की गई।

लेकिन ग्रामीण भारत में पीने के साफ पानी की उपलब्धता की मौजूदा हालत देखते हुए किसी भी तरह से यह निष्कर्ष निकाल पाना कठिन है कि हजारों करोड़ रुपये और दसियों योजनाओं का कोई खास सकारात्मक परिणाम हासिल हो पाया है। एक अनुमान के मुताबिक आज भी करीब 3.77 करोड़ लोग हर साल दूषित पानी के इस्तेमाल से बीमार पड़ते हैं, करीब 15 लाख बच्चे दस्त से अकाल मौत मरते हैं और पानी से होने वाली बीमारियों के कारण करीब 7.3 करोड़

कार्यदिवस बरबाद हो जाते हैं। इन सबसे भारतीय अर्थव्यवस्था को हर साल करीब 60 करोड़ डॉलर का नुकसान होता है। भूजल स्तर का लगातार कम होते जाना तो एक समस्या है, लेकिन जो पानी उपलब्ध है उसकी गुणवत्ता भी चिंताजनक स्तर तक खराब है। लाखों हेक्टेयर इलाकों में भूजल ही कई घातक बीमारियों का कारण है। करीब 6.6 करोड़ लोग अत्यधिक फ्लोराइड वाले पानी के घातक नतीजों से जूझ रहे हैं, जबकि करीब 1 करोड़ लोग अत्यधिक आर्सेनिक वाले पानी के शिकार हैं। कई जगहों पर पानी में लोहे (आयरन) की ज्यादा मात्रा भी बड़ी परेशानी का सबब है। देश में मौजूद कुल 14.2 लाख रिहायशी बस्तियों में से 1,95,813 रिहायशी बस्तियां आज भी पीने के पानी की अशुद्धता के नतीजों को भोगने के लिए अभिशप्त हैं।

इस लिहाज से गांवों में पीने के पानी की समस्या को तीन हिस्सों में देखा जाना चाहिए। एक तो भूजल का गिरता स्तर, दूसरा पीने लायक साफ पानी की आपूर्ति का अभाव और तीसरा, उपलब्ध पानी की गुणवत्ता। आमतौर पर पीने के पानी की समस्या का आकलन आसपास के इलाके में मौजूद जल निकायों की संख्या और भूजल की गहराई से किया जाता है, लेकिन एक बड़ी समस्या आपूर्ति की भी है। देश के कई इलाकों में पीने का पानी लाने के लिए मटके लेकर पैदल कई किलोमीटर का सफर करती महिलाओं की तस्वीरें बहुत आम हैं और यह समस्या का एक बड़ा पहलू है। लेकिन इन तस्वीरों के पीछे छिपा एक तथ्य यह भी है कि देश के ज्यादातर इलाकों में पानी की कमी नहीं है। सरकारी रिकॉर्ड के मुताबिक ग्रामीण जनसंख्या के 94 प्रतिशत और शहरी जनसंख्या के 91 प्रतिशत हिस्से को पीने का साफ पानी उपलब्ध है। पेयजल आपूर्ति विभाग के आंकड़े बताते हैं कि देश की 14.2 लाख रिहायशी इकाइयों में से 12.7 लाख पूरी तरह कवर्ड (एफसी) हैं, 1.3 लाख आंशिक तौर पर कवर्ड (पीसी) हैं जबकि 15,917 ऐसी हैं जो बिलकुल भी कवर्ड नहीं (एनसी) हैं। लेकिन वस्तुस्थिति इन आंकड़ों से मेल नहीं खाती है क्योंकि कवरेज के आंकड़े केवल इंस्टॉल्ड कैपेसिटी बताते हैं न कि पानी की गुणवत्ता या लोगों के बीच उसकी वास्तविक आपूर्ति। इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। महाराष्ट्र के अमरावती जिले में एक बड़ा इलाका ऐसा है, जहां भूजल स्तर 150–200 फुट के बीच है लेकिन वहां के लोग इस पानी का इस्तेमाल पीने के लिए तो बात ही दूर खेती तक के लिए नहीं कर सकते क्योंकि यह बहुत खारा है।

देश के ग्रामीण इलाकों में लगभग 85 प्रतिशत जनसंख्या अपने दैनिक कामकाज के लिए पूरी तरह भूजल पर ही निर्भर है और यह भूजल लगातार कम हो रहा है। एक अनुमान के मुताबिक भारत में जमीन की सतह के ऊपर और नीचे कुल 1,869 अरब घनमीटर ताजा पानी मौजूद है, जिसमें करीब 40 प्रतिशत इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। इस्तेमाल योग्य भूजल का करीब 92 प्रतिशत खेती में, 5 प्रतिशत उद्योगों में और 3 प्रतिशत घरेलू उपयोग में आता है, जबकि सतह के ऊपर मौजूद पानी का 89 प्रतिशत खेती में, 2 प्रतिशत उद्योग में और 9 प्रतिशत घरों में प्रयोग होता है। लेकिन भारत में देश की जनसंख्या बढ़ने के साथ ही प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता घटती जा रही है। देश में पेयजल संकट के मूल में यहां की विशाल जनसंख्या है। एक ओर जहां विश्व की लगभग 17 प्रतिशत जनसंख्या यहां निवास करती है, वहीं विश्व में मौजूद कुल ताजा पानी का महज 4 प्रतिशत ही भारत में है। भारत में प्रति व्यक्ति पानी की सालाना उपलब्धता 1955 में 5300 घनमीटर थी, जो 2001 की जनगणना के आधार पर घटकर 1816 घनमीटर रह गई और 2011 की जनगणना के आधार पर 1545 घनमीटर पर आ गई है। प्रति व्यक्ति पानी की उपलब्धता के लिहाज से भारत का स्थान दुनिया में 133वां है, जबकि पानी की गुणवत्ता के लिहाज से यह दुनिया में 122वें स्थान पर है। किसी देश में जब प्रति व्यक्ति पानी की सालाना उपलब्धता 1700 घनमीटर से कम हो जाती है, उसे पानी की कमी वाला (वाटर स्ट्रेस्ड) देश कहा जाता है। इस लिहाज से भारत अब पानी की कमी वाला देश है। यह एक खतरनाक स्थिति है।

ग्रामीण भारत में विद्यमान पेयजल संकट को दूर करने के

रिहायशी इकाई (हैबिटेशन) किसे कहते हैं?

सरकारी परिभाषा के मुताबिक रिहायशी इकाई किसी भी ऐसी जगह को माना जाता है जहां कम से कम 200 लोग रहते हैं।

एफसी, पीसी और एनसी क्या है?

एफसी (फुली कवर्ड)	इलाके में रहने वाले सभी लोगों को 40 एलपीसीडी या उससे ज्यादा साफ पीने का पानी उपलब्ध हो।
पीसी (पार्शियली कवर्ड)	वह रिहायशी इकाई, जिसके 1.6 किलोमीटर (पहाड़ी इलाकों में 100 मीटर ऊंचाई) के अंदर ताजे पानी के एक या ज्यादा स्रोत मौजूद तो हो, लेकिन उससे होने वाली पानी की आपूर्ति 10 से 40 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन (एलपीसीडी) के बीच हो।
एनसी (नॉन कवर्ड)	वह रिहायशी इकाई, जिसके 1.6 किलोमीटर (पहाड़ी इलाकों में 100 मीटर ऊंचाई) के अंदर ताजे पानी का एक भी स्रोत मौजूद न हो, अगर स्रोत हो भी तो वह अत्यधिक खारा हो, फ्लोराइड, आयरन, आर्सेनिक इत्यादि रासायनिक तत्वों से संक्रमित हो, या फिर 10 एलपीसीडी से कम साफ पीने लायक पानी उपलब्ध कराता हो।

ग्रामीण भारत में पेयजल समस्याः भयावह परिदृश्य	
1.	भारत की करीब 84 करोड़ ग्रामीण जनता में से केवल 18 प्रतिशत को ही ट्रीट किया हुआ पानी उपलब्ध हो पाता है। इसकी तुलना अगर मोबाइल फोनधारकों से करें, तो इनकी संख्या 41 प्रतिशत है।
2.	देश में केवल एक–तिहाई ग्रामीण परिवारों को पाइप से पानी की आपूर्ति होती है। साल 2011 की जनगणना के मुताबिक ग्रामीण इलाकों में रहने वाले करीब 69 करोड़ लोगों को पीने का साफ पानी उपलब्ध नहीं है।
3.	ग्रामीण भारत में मौजूद पाइप से मिलने वाले पानी का आधे से ज्यादा ट्रीट किया हुआ नहीं होता।
4.	ट्रीट किए हुए पानी की उपलब्धता दरअसल राज्यों के आधार पर बदलती रहती है। आंध्र प्रदेश में जहां 36 प्रतिशत ग्रामीण जनता को ट्रीट किया हुआ पानी मिलता है, वहीं बिहार में यह संख्या केवल 2 प्रतिशत है।
5.	विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुमान के मुताबिक, हर साल करीब 3.8 करोड़ लोगों को पानी के कारण कई तरह की बीमारियां होती हैं। इनमें 75 प्रतिशत बच्चे होते हैं। अशुद्ध पानी के कारण करीब 8 लाख मौतें होती हैं, जिनमें 4 लाख मौतें केवल दस्त के कारण होती हैं।
6.	पानी की गुणवत्ता के लिहाज से भारत का स्थान 122 देशों में 120वां है और पानी की उपलब्धता के लिहाज से 180 देशों में यह 133वें स्थान पर है।
स्रोतः सेफ वॉटर नेटवर्क	

लिए हमें उन्हीं तीन समस्याओं पर काम करना होगा, जिनकी पहचान हमने ऊपर के हिस्से में की है। भूजल के गिरते स्तर को रोककर उसे बढ़ाने का उपाय करना, उपलब्ध पानी को रिहायशी इलाकों के अंदर हैंडपंप या पाइप के जरिए ऐसी जगहों पर पहुंचाना, जहां से लोगों को 24 घंटे आसानी से पानी मिल सके और ऐसी जगहों पर जहां भूजल में रासायनिक संक्रमण है, या पानी खारा है, वहां उसका उपचार (ट्रीट) कर पाइप के जरिए घरों में पहुंचाने की व्यवस्था करना। इन तीनों बिंदुओं पर एक साथ प्रभावी तरीके से काम कर ही ग्रामीण भारत की प्यास को खत्म किया जा सकता है और करीब 70 प्रतिशत जनता को कई बीमारियों और अकाल मौतों से बचाया जा सकता है।

भूजल स्तर बढ़ाने के लिए एकमात्र तरीका वर्षा के जल का संरक्षण है। यह संरक्षण दो तरीके से हो सकता है। चूंकि भूजल का सबसे ज्यादा इस्तेमाल, लगभग 90 प्रतिशत, खेती में होता है इसलिए इसका स्तर बढ़ाने के लिए खेतों को ही इस्तेमाल किया जा सकता है। नेचुरल फार्मिंग के जाने–माने विशेषज्ञ और किसान सुभाष शर्मा यवतमाल अपने 17 एकड़ खेतों में वर्षा को संरक्षित रखने के लिए कई तरीके अपनाते हैं, जैसे ग्रिड लॉकिंग, माइक्रो लॉकिंग, प्राकृतिक खेती, 80 फुट गड्ढे की खुदाई इत्यादि। इसके दो तरह के फायदे होते हैं। एक तो उन्हें अपने खेतों के लिए साल भर का पानी वर्षा के संरक्षित जल से ही मिल जाता है और दूसरा, उनके खेतों के नीचे और आसपास की जमीन में भूजल का रिचार्ज भी होता है। वर्षा के पानी का संरक्षण किस हद तक भूजल के हालात बदल सकता है, इसे केवल इस आंकड़े से समझा जा सकता है कि एक वर्ग मीटर भूमि पर एक मिलीमीटर वर्षा के पानी को एकत्र किया जाए तो वह एक लीटर के बराबर होता है। यानी एक हेक्टेयर भूमि (10,000 वर्ग मीटर) पर गिरने वाले 100 सेंटीमीटर (1000 एमएम) पानी की मात्रा एक करोड़ लीटर के बराबर होती है। 9 सितंबर, 2016 को पत्र सूचना कार्यालय (पीआईबी) द्वारा जारी एक प्रेस विज्ञप्ति के मुताबिक इस साल कुल 10.54 करोड़ हेक्टेयर जमीन पर खरीफ फसलों की खेती की गई है। यदि इतनी जमीन पर देश की औसत 1160 एमएम बारिश को संरक्षित कर लिया जाए तो भूजल में कितनी बढ़ोतरी हो सकती है, इसकी कल्पना की जा सकती है।

भूजल स्तर ठीक करने का एक अन्य तरीका तालाबों की खुदाई भी है। ज्यादा समय नहीं बीता जब भारत के हर गांव में कम से कम एक तालाब जरूर हुआ करता था। लेकिन धीरे–धीरे लोगों ने तालाबों को भर कर उस पर कब्जा करना शुरू कर दिया और अब लाखों गांवों से तालाब लुप्त हो गए हैं। महाराष्ट्र में देवेंद्र फड़नवीस द्वारा शुरू की गई जलयुक्त शिविर योजना और छत्तीसगढ़ में रमन सिंह सरकार की तालाब खुदाई की योजना के परिणाम कुछ हद तक दिखने लगे हैं। केंद्र सरकार ने भी मनरेगा के तहत 5 लाख तालाबों की खुदाई का जो महत्वाकांक्षी लक्ष्य रखा है, उसका आधा हिस्सा भी अगर पूरा हो सका, तो आने वाले वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों के लिए पेयजल की समस्या का बहुत हद तक समाधान हो सकेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल की समस्या का जो दूसरा रूप आपूर्ति के रूप में है, उसका समाधान सामाजिक भागीदारी के साथ किया जाना चाहिए। जयपुर जिले के जमवा रामगढ़ ब्लॉक में भींवास गांव के किसानों ने आपसी समिति बनाकर 70 हजार लीटर क्षमता की पानी टंकी का निर्माण करवाया है। चूंकि उस इलाके में भूजल का स्तर ठीक है, तो स्थानीय विधायक की मदद से बोरवेल के जरिए उस टंकी में पानी चढ़ाया जाता है और अगले महीने–दो महीने में गांव के सभी 113 घरों में पाइप से पानी पहुंचाने की योजना बन रही है। जन–भागीदारी के अलावा वितरण की व्यवस्था को ज्यादा सक्षम बनाना और व्यवस्थित करना समस्या के समाधान का एक अन्य उपाय है। कर्नाटक के हुबली–धारवाड़, बेलगांव और गुलबर्गा में 2006 से चल रही एक स्कीम के तहत विश्व बैंक

की मदद से 1,80,000 लोगों के लिए चौबीसों घंटे पानी की आपूर्ति सुनिश्चित की गई, जबकि पहले उन्हें हफ्ते में एक बार कुछ घंटों के लिए पानी मिलता था। इन दोनों ही उदाहरणों में पानी की प्राकृतिक उपलब्धता में बिना कोई बदलाव किए केवल वितरण की प्रणाली को सुव्यवस्थित कर बेहतर प्रबंधन से बदलाव लाया जा सका।

तीसरी समस्या, यानी ग्रामीण इलाकों में गुणवत्तायुक्त पानी की आपूर्ति करना सबसे बड़ी चुनौती है क्योंकि इसमें बड़े पैमाने पर निवेश की जरूरत होती है। यहां सरकार को पीपीपी यानी निजी क्षेत्र की भागीदारी के साथ वॉटर ट्रीटमेंट प्लांट लगाने की जरूरत होगी। पानी को आर्सेनिक, फ्लोराइड, आयरन जैसे रसायनों से मुक्त कर साफ सुरक्षित पेयजल उपलब्ध कराने का दूसरा कोई विकल्प नहीं है। हालांकि जल परियोजनाओं के लिए जारी होने वाले सरकारी फंड की शर्तों में एक बुनियादी कमी यह है कि वह सबसे कम बोली लगाने वाले के पक्ष में जाता है, न कि सबसे बेहतर गुणवत्ता का पानी उपलब्ध कराने वाले के पक्ष में। इस तरह की विसंगतियों को ठीक कर ग्रामीण इलाकों में सुरक्षित पेयजल उपलब्ध कराया जा सकता है।

रासायनिक तत्वों से प्रभावित पानी वाले राज्यों और जिलों की संख्या

रासायनिक तत्व	प्रभावित राज्यों की संख्या	प्रभावित जिलों की संख्या
आर्सेनिक	10	68
फ्लोराइड	20	276
नाइट्रेट	21	387
आयरन	24	2976

विश्व के कुल क्षेत्रफल का हिस्सा	2.4
विश्व की कुल जनसंख्या का हिस्सा	17.1
विश्व में उपलब्ध कुल ताजे पानी का हिस्सा	4
प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता	1545 घनमीटर (2011 की जनगणना के आधार पर)
प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता में स्थान	133
पानी की गुणवत्ता के मामले में विश्व में स्थान	122
सालाना औसत वर्षा	1160 एमएम (विश्व का औसत 1110 एमएम)

कुल मिलाकर जो परिदृश्य उभरता है, वह चिंताजनक है, निराशाजनक है, लेकिन साथ ही उम्मीदों का दीपक भी बदस्तूर चल रहा है। चाहे महाराष्ट्र हो या राजस्थान या फिर कर्नाटक, इन सभी जगहों पर सफलतापूर्वक जो भी प्रयोग हुए हैं या हो रहे हैं, वे आगे की राह दिखाते हैं। लेकिन समस्या की विकरालता और समय की कमी को देखते हुए तय है कि सरकार और समाज को मिलकर बिना समय गंवाए हर संभव विकल्प पर तुरंत काम शुरू करना चाहिए। तभी देश के गांवों में रहने वाली 70 प्रतिशत से ज्यादा जनता को पीने का साफ पानी मिल सकेगा और देश का भविष्य दस्त और अतिसार जैसी बीमारियों के कारण असमय काल–कवलित नहीं होगा।

(लेखक आर्थिक और कोरपोरेट मामलों के जानकार हैं; वर्तमान में कम्युनिकेशन प्रोफेशनल के तौर पर नेशनल कमोडिटी एक्सचेंज के साथ जुड़े हैं।)

ई–मेल bhaskarbhuwan@gmail.com

क्या पूरा होगा घर का सपना

–सतीश सिंह

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी चाहते हैं कि 'सभी को आवास' का सपना जल्दी से जल्दी पूरा हो। इसके लिए उन्होंने "प्रधानमंत्री आवास योजना" की शुरुआत की है। इस योजना का उद्देश्य शहरी एवं ग्रामीण बेघरों को घर मुहैया कराना है, लेकिन यह घर सरकार सीधे तौर पर लाभार्थी को उपलब्ध नहीं कराएगी। इसके लिए सरकार ने ऋण एवं सब्सिडी देने का प्रावधान किया है।

मौजूदा समय में सस्ते घर का सपना लोगों के लिए महज सपना बनकर रह गया है। आज एक कमरे का फ्लैट या छोटा घर खरीदने में भी निम्न एवं मध्यम वर्ग समर्थ नहीं हैं। हालत यह है कि लगभग एक सौ तीस करोड़ आबादी वाले इस देश में अधिकांश लोगों के घर का सपना पूरा नहीं हो पा रहा है। अनेक लोग बिना घर के ही परलोक सिधार जाते हैं। लोकसभा के चुनाव में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने सभी को 2022 तक आशियाना देने का वादा किया था और इसे पूरा करने के लिए वर्ष 2015 के जून महीने में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने 2022 तक सभी बेघरों को पक्का आवास मुहैया कराने से संबंधित एक प्रस्ताव पारित किया, जिस पर सरकार तेजी से अग्रतर कार्रवाई कर रही है।

देखा जाए तो नोटबंदी के पीछे एक महत्वपूर्ण कारण रियल एस्टेट में से कालेधन को खत्म करके मकान की कीमत को आम आदमी की पहुंच में लाना भी था। इस फैसले से बड़े मकानों की बिक्री रूक गई हैं, क्योंकि महंगे मकान आमतौर पर कालेधन से खरीदे जा रहे थे। ऐसे में लोग छोटे मकान खरीदने के लिए प्रेरित हो रहे हैं। कंफेडरेशन ऑफ रियल एस्टेट डेवलेपर्स एसोसिएशन ऑफ इंडिया के अनुसार आने वाले कुछ महीनों में छोटे मकान खरीदने में तेजी आ सकती है, क्योंकि मंदी के दौर से बाहर निकलने के लिए बिल्डर छोटे मकानों की कीमत में कटौती कर सकते हैं। बहरहाल, आज की तारीख में लोग संगठित और स्थापित बिल्डरों से संपर्क करना पसंद कर रहे हैं। ऐसा होने का एक कारण द्वितीयक बाजार के खरीदारों का प्राथमिक बाजार में निवेश करने में रूचि दिखाना है। इसका एक महत्वपूर्ण कारण कर्ज ब्याज दर में कटौती की संभावना भी

है। नोटबंदी के कारण बैंकों में लो कॉस्ट डिपॉजिट जमा हो रहे हैं। लो कॉस्ट डिपॉजिट की उपलब्धता से बैंक कर्ज ब्याज दर में कटौती करने में समर्थ होंगे, क्योंकि सस्ती पूंजी की उपलब्धता रहने पर ही बैंक कर्ज ब्याज दर में कटौती कर सकते हैं। सस्ते कर्ज होने से भी छोटे मकानों को खरीदने में लोग रूचि लेंगे।

'सभी को आवास' का सपना जल्दी से जल्दी पूरा हो प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने इसलिए "प्रधानमंत्री आवास योजना" का शुभारंभ किया है। इस योजना का उद्देश्य शहरी एवं ग्रामीण बेघरों को घर मुहैया कराना है, लेकिन यह घर सरकार सीधे तौर पर लाभार्थी को उपलब्ध नहीं कराएगी। इसके लिए सरकार ने ऋण एवं सब्सिडी देने का प्रावधान किया है। ऋण पर कम ब्याज दर प्रभारित किया जाएगा और नियमों के तहत घर बनाने पर लाभार्थी को सब्सिडी दी जाएगी। शहरी गरीबों के लिए 4,041 शहरों एवं कस्बों को शामिल करने की योजना है, लेकिन फिलहाल केवल 500 शहरों में इस योजना को लागू कराने के लिए रोडमैप तैयार किया गया है, लेकिन ग्रामीण क्षेत्र में दिल्ली और चंडीगढ़ को छोड़कर पूरे देश के ग्रामीण इलाकों को एक साथ इस योजना की जद में लाया गया है।

शहरी गरीबों को सस्ती दर पर घर दिलाने के लिए सरकार ने नवंबर, 2016 से ऑनलाइन आवेदन मंगाना शुरू किया है। शहरी आवास एवं गरीबी उन्मूलन मंत्रालय एवं ई–गवर्नेंस सर्विसेज इंडिया लिमिटेड ने मिलकर देश भर में स्थापित 60,000 कॉमन सर्विस सेंटर्स पर इसके फॉर्म जमा कराने की व्यवस्था की है। जमा फॉर्म की पावती से आवेदन–पत्र की स्थिति का पता किया जा सकेगा। इस सुविधा का लाभ लेने के लिए आधार कार्ड को जरूरी आधार बनाया गया है, लेकिन इसके बिना किसी आवेदक को योजना का लाभ लेने से वंचित नहीं किया जाएगा। केंद्रीय शहरी विकास मंत्री वैंकेया नायडू के मुताबिक बीते एक साल में मोदी सरकार ने इस योजना के तहत 11 लाख शहरी गरीबों को आवास मुहैया कराया है और अब नई व्यवस्था से इस दिशा में तेजी आने की संभावना है।

"प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना" के तहत 23 मार्च, 16 को सरकार ने देश के ग्रामीण क्षेत्रों में 2.95 करोड़ पक्के घरों के निर्माण की मंजूरी दी। प्रस्ताव के मुताबिक इस योजना के तहत बने घर नेशनल बिल्डिंग कोड (एनआईसी) मानकों के तहत भूकंप, बाढ़, भूस्खलन एवं चक्रवात रोधी होंगे। इस योजना के अंतर्गत 3 सालों यानी 2016 से 2019 की अवधि में 81975 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे, जिसमें से 60 हजार करोड़ रुपये बजट प्रावधान के जरिए और शेष 21,975 करोड़ रुपये नाबार्ड की निधि से खर्च किए जाएंगे।

ग्रामीण मैदानी इलाकों में बनने वाले घरों पर 1.20 लाख रुपये और पहाड़ी इलाकों में बनने वाले घरों पर 1.30 लाख

रुपये सरकार की तरफ से वित्तीय सहायता के तौर पर बेघरों को उपलब्ध कराए जाएंगे। इस योजना को दिल्ली और चंडीगढ़ को छोड़कर पूरे देश में लागू किया जाएगा। इस योजना की लागत को केंद्र एवं राज्य सरकार आपस में मिलकर वहन करेंगे, जिसमें केंद्र का हिस्सा ज्यादा होगा। एक अनुमान के मुताबिक देश के ग्रामीण इलाकों में बेघरों की संख्या लगभग 2.95 करोड़ है। यह आंकड़ा 2011 की आर्थिक, सामाजिक एवं जातीय जनगणना को आधार बनाकर निकाला गया है।

"प्रधानमंत्री आवास योजना" के तहत अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग, महिलाओं आदि को लाभ दिया जाएगा। नए घर का आवंटन या तो महिला आवेदक को किया जाएगा या फिर संयुक्त रूप से महिला एवं पुरुष आवेदक को। हां, कोई आवेदक बुजुर्ग है तो उसे प्राथमिकता दी जाएगी। इस आलोक में 30 वर्ग मीटर कार्पेट एरिया वाले घर के लिए आर्थिक रूप से कमजोर आवेदक की आय 3 लाख से अधिक नहीं होनी चाहिए, वहीं कम आय वाले वर्ग के आवेदक के लिए 60 वर्ग मीटर कार्पेट एरिया वाले घर हासिल करने के लिए उनकी आय 3 से 6 लाख के बीच में होनी चाहिए। आवेदक को योजना का लाभ उठाने के लिए पहचान प्रमाण एवं आवास प्रमाणपत्र की जरूरत होगी, लेकिन आधार कार्ड रहने पर आसानी होगी।

शहरी क्षेत्र में इस योजना को अमलीजामा पहनाने के लिए योजना को तीन चरणों में विभक्त किया गया है। प्रथम चरण की अवधि अप्रैल, 2015 से मार्च, 2017 है। इस अवधि में 100 शहरों में इस योजना को लागू किया जाएगा। दूसरा चरण, जिसकी अवधि है अप्रैल, 17 से मार्च, 19 में 200 से अधिक शहरों में इस योजना को कार्यान्वित किया जाएगा। तीसरे चरण की अवधि है अप्रैल,

प्रधानमंत्री
आवास योजना ग्रामीण

'सभी के लिए आवास'

20 नवंबर, 2016 को प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने प्रधानमंत्री आवास योजना–ग्रामीण का शुभारंभ आगरा से किया जिसके अंतर्गत सभी ग्रामीण परिवारों को वर्ष 2022 तक पर्यावरणीय रूप से सुरक्षित व पक्के घर उपलब्ध कराने का प्रावधान है। नवीन योजना में तालमेल के माध्यम से लाभार्थी को प्रति इकाई लगभग 1.50–1.60 लाख रुपये उपलब्ध होंगे। लाभार्थी की इच्छा पर रुपये 70,000 की राशि के ऋण का भी प्रावधान है। मार्च, 2019 तक एक करोड़ घर निर्मित किए जाएंगे। लाभान्वितों का चयन सामाजिक–आर्थिक जनगणना, 2011 के आधार पर तथा ग्रामसभा के अनुमोदन से किया गया है। भवनहीन तथा एक या दो कमरे के कच्ची छत, कच्ची दीवार के मकान में रहने वाले गरीब परिवारों को इस कार्यक्रम में शामिल किया गया है। स्थानीय निर्माण सामग्री के अधिकतम उपयोग के साथ रसोई, बिजली कनेक्शन, एलपीजी, स्नानघर व शौचालय के प्रावधानों से युक्त कर आवास को एक पूर्ण रूप दिया जाएगा। लाभान्वितों को भुगतान पूरी तरह आईटी/डीबीटी के माध्यम से किया जाएगा तथा आईसीटी व स्पेस टेक्नोलॉजी (अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी) के उपयोग से कार्य की प्रगति का अनुश्रवण आवाससॉफ्ट एमआईएस पर किया जाएगा।

2019 से मार्च, 2022। इस कालखंड में देश के बचे हुए शहरों में इस योजना को लागू कराया जाएगा, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में इस योजना को 2019 तक पूरी तरह से लागू करा दिया जाएगा।

"प्रधानमंत्री आवास योजना" के तहत 6 लाख रुपये तक का कर्ज 6.5 प्रतिशत के कर्ज दर पर 15 साल तक के लिए गृह ऋण लाभार्थी को उपलब्ध कराया जाएगा, जोकि सामान्य तौर पर एक आम गृह ऋण के आवेदक को 10 से 10.50 प्रतिशत ब्याज दर पर उपलब्ध कराया जाता है। इससे लाभार्थियों को 1 से 2.30 लाख रुपये का फायदा 15 साल की अवधि के कर्ज में होगा। साथ ही, कम कर्ज ब्याज दर प्रभारित होने से लाभार्थी को अमूमन 2000 रुपये प्रति माह कम किश्त बैंक में जमा करनी होगी।

योजना के मुताबिक निजी डेवलपर्स के साथ मिलकर झुग्गी व झोपड़ियों का पुनर्निर्माण भी किया जाएगा। आर्थिक रूप से कमजोर (ईडब्ल्यूएस) एवं कम आय वाले वर्ग (एलआईजी) के अंतर्गत आने वाले लाभार्थी के घर का कार्पेट एरिया 30 वर्ग मीटर एवं सामान्य वर्ग के आवेदकों के घर का कार्पेट एरिया 60 वर्ग मीटर होने पर ही उन्हें योजना का लाभ दिया जाएगा। मामले में ईडब्ल्यूएस के आवेदकों को 35 प्रतिशत आरक्षण देने की भी व्यवस्था की गई है। इस योजना के तहत केंद्र सरकार प्रत्येक लाभार्थी को 1 लाख रुपये तक की सब्सिडी सीधे उनके खाते में अंतरण करेगी।

शहरी गरीबों को इस योजना के तहत नए घर लेने पर केंद्र सरकार 1.50 लाख रुपये तक की सहायता देगी। इसी क्रम में वैसे शहरी गरीबों को जो अपने मौजूदा मकान की मरम्मत करा रहे हैं को भी केंद्र सरकार 1.50 लाख रुपये तक की वित्तीय मदद करेगी।

निश्चित रूप से मोदी सरकार की यह एक महत्वाकांक्षी योजना है, जिसका उद्देश्य कल्याणकारी है। पूर्व में राजीव गांधी द्वारा 1985 में शुरू की गई "इंदिरा आवास योजना", जो गरीबी–रेखा से नीचे रहने वाले ग्रामीणों के लिए शुरू की गई थी, अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में असफल रही है। मोदी सरकार द्वारा शुरू की गई "प्रधानमंत्री आवास योजना" स्वरूप एवं व्यापकता में "इंदिरा आवास योजना" से बेहतर है, लेकिन इस योजना के संदर्भ में भी समस्या इस योजना को सफलतापूर्वक अमलीजामा पहनाने से जुड़ी हुई है।

कहा जा सकता है कि खुद का घर बनाना आज सभी के लिए एक सपने के समान है। इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो जरूर लगता है कि यह योजना पहले की योजनाओं से बेहतर तरीके से काम करेगी, लेकिन इस संदर्भ में भी आशंकाओं को सिरे से खारिज नहीं किया जा सकता है। आजादी के बाद देश में बहुत सारी कल्याणकारी योजनाएं बनाई गई हैं, जिसमें सरकार ने सब्सिडी या कर्ज ब्याज दर में रियायत देने का प्रावधान किया था। फिर भी इन योजनाओं के लाभार्थियों ने व्यवस्था या प्रणाली में व्याप्त कमियों व खामियों का फायदा उठाते हुए योजनाओं के मकसद को पूरी तरह से विफल कर दिया। मोदी सरकार की इस योजना को भी त्रुटिहीन नहीं माना जा सकता है। बावजूद इसके, इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि देश के कुछ गरीब इस योजना से जरूर लाभान्वित होंगे। इधर, नोटबंदी से रियल एस्टेट से कालेधन की सफाई होने की उम्मीद है। लिहाजा उम्मीद है कि आने वाले समय में ईमानदार लोग अपने घर के सपने को पूरा कर सकते हैं।

(लेखक पत्रकार हैं और विगत पांच वर्षों से विविध पत्र–पत्रिकाओं के लिए आर्थिक एवं बैंकिंग विषयों पर स्वतंत्र लेखन कर रहे हैं।)
ई–मेल : satish5249@gmail.com

सहजतापूर्वक पठनीय ई–बुक्स के रूप में उपलब्ध हमारी चुनी हुई पुस्तकें

ऑनलाइन खरीदें

play.google.com, kobo.com

amazon.in

Android, iOS, Kindle, Kobo आदि
सभी ऑपरेटिंग सिस्टम के अनुकूल

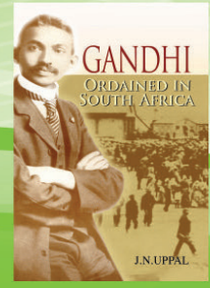

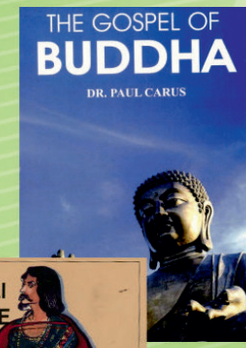

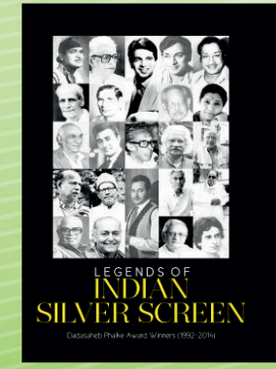

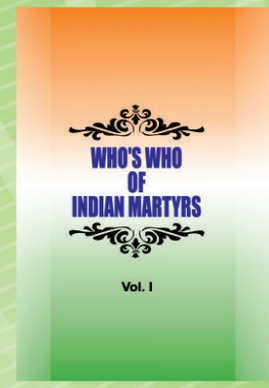

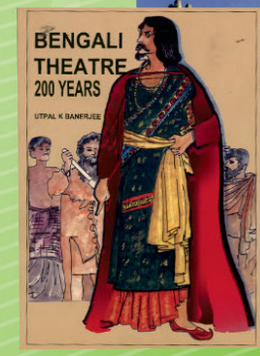

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

वेब साइट : publicationsdivision.nic.in

@DPD_India @publicationsdivision

रफ्तार पकड़ रहा है डिजिटल आधारभूत ढांचे का विकास

–बालेन्दु शर्मा दाधीच

भारत के पांच लाख से ज्यादा गांवों में दूरसंचार टॉवर लग चुके हैं। इनमें से करीब साठ फीसदी ग्रामीण इलाकों में हैं। डिजिटल इंडिया के तहत और साठ हजार टॉवर स्थापित किए जाने हैं। समस्या यह है कि इस तरह के टावरों पर भारी खर्च आता है। इन नए साठ हजार टॉवरों पर ही यह खर्च 20 हजार करोड़ से 25 हजार करोड़ के बीच माना जा रहा है। इसके लिए पब्लिक–प्राइवेट पार्टनरशिप (पीपीपी) मॉडल की शरण लेनी होगी।

भारत के गांवों में सूचना और संचार संबंधी आधारभूत सुविधाओं का विकास गति पकड़ रहा है। जिस अंदाज में मोबाइल फोन, केबल टेलीविजन और इंटरनेट के उपभोक्ताओं की संख्या में तेजी से बढ़ोतरी हो रही है उसे देखते हुए यह तेजी अस्वाभाविक नहीं लगती। एक तरफ केंद्र सरकार और राज्य सरकारों में सरकारी सेवाओं को डिजिटल माध्यमों से आम लोगों तक पहुंचाने का संकल्प मजबूत हुआ है तो दूसरी ओर बाजार की शक्तियां भी ग्रामीण सुविधाओं और ढांचागत विकास पर ध्यान केंद्रित कर रही हैं।

अब वह जमाना नहीं रहा जब गांव के लोगों को टेलीफोन पर बात करने के लिए पास के शहर की यात्रा करनी पड़ती थी या टेलीविजन देखने के लिए किसी एक घर में जुट जाना होता था। विकास की यात्रा गांवों तक भी पहुंची है और भारत में प्रति व्यक्ति आय में लगातार हो रही बढ़ोतरी ग्रामीण उपभोक्ता के निरंतर सक्षम और समर्थ होते चले जाने का सबूत है। अब डिजिटल इंडिया, ई–कॉमर्स और मोबाइल तकनीकों की बढ़ती लोकप्रियता के दौर में गांवों में विकास के नए रूप देखने को मिल रहे हैं। यह विकास अपने साथ अनेक तरह के अवसर भी लेकर आ रहा है जिनमें रोजगार सृजन से लेकर कारोबार का विस्तार और शिक्षा के साथ–साथ जागरूकता का प्रसार भी शामिल है।

ग्रामीण विकास पर दूरसंचार तकनीकों का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। गांव–गांव में मोबाइल टेलीफोनी के लिए ऊंचे–ऊंचे टावर दिखने लगे हैं और कुछ कंपनियां सिर्फ टावर के कारोबार पर ध्यान केंद्रित कर हजारों करोड़ के कारोबार तक जा पहुंची हैं। अब डिजिटल इंडिया के तहत ढाई लाख गांवों तक ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी पहुंचाने और फोन सुविधा से जोड़ देने की केंद्र सरकार की महत्वाकांक्षी योजना के चलते विकास की रफ्तार का और तेज होना तय है। कई देशों में देखा गया है कि मोबाइल संचार और वायरलैस ब्रॉडबैंड जैसी तकनीकें ग्रामीण समाज को सबल बनाने में योगदान देती हैं। लेटिन अमेरिका से लेकर अफ्रीका तक के जिन देशों में ग्रामीण–स्तर पर इन तकनीकों का ज्यादा प्रसार हुआ है वहां सकल घरेलू उत्पाद और प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि देखने को मिली है। जागरूक समाज से जुड़े पहलुओं में भी स्पष्ट सकारात्मक बदलाव दिखाई देते हैं। भारत भी अपने गांवों को आधारभूत दृष्टि से मजबूत कर इसी राह पर बढ़ रहा है।

पिछले कुछ समय से इस तरह के विचार सामने आ रहे हैं कि गांवों में जहां–जहां दूरसंचार के टावर लगाए गए

हैं उनके आसपास के इलाकों को डिजिटल सेवाओं से युक्त सामाजिक गतिविधियों के केंद्रों के रूप में विकसित किया जाए। आशय यह कि दूरसंचार टावरों के आसपास ऐसी दुकानें, दफ्तर आदि खोले जाएं जिनमें तमाम किस्म की सरकारी सुविधाएं उपलब्ध हों। मिसाल के तौर पर ई–गवर्नेंस या ई–शिक्षा। सरकारी दस्तावेजों की प्रतियां लेने से लेकर भूमि रिकॉर्ड और तमाम तरह के फॉर्म भरने से लेकर उन्हें डाउनलोड करने जैसे तमाम कार्य इन केंद्रों के जरिए किए जाएं। यह अवधारणा केंद्र सरकार द्वारा प्रस्तावित संयुक्त सेवा केंद्रों (कॉमन सर्विस सेंटर) के माध्यम से फलीभूत होती दिखाई दे रही है।

संयुक्त सेवा केंद्रों का विकास ग्रामीण उद्यमियों को साथ लेकर किया जा रहा है। केंद्र सरकार दो लाख से ज्यादा गांवों में ऐसे युवा उद्यमियों को केंद्र खोलने के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित कर रही है। इन केंद्रों में इंटरनेट के माध्यम से सरकारी सेवाएं तो मुहैया कराई ही जाएंगी, ग्रामीण युवकों को कौशल प्रशिक्षण देने और बहुत सारे उत्पादों की बिक्री जैसे कार्य भी किए जाएंगे। ये केंद्र हर गांव में डिजिटल आधारभूत ढांचे के विकास के केंद्रों के रूप में उभर जाएंगे और अपने आसपास के इलाके में भी विकास और कौशल को प्रोत्साहित करेंगे।

भारत के पांच लाख से ज्यादा गांवों में दूरसंचार टॉवर लग चुके हैं। इनमें से करीब साठ फीसदी ग्रामीण इलाकों में हैं। डिजिटल इंडिया के तहत और साठ हजार टॉवर स्थापित किए जाने हैं। समस्या यह है कि इस तरह के टावरों पर भारी खर्च आता है। इन नए साठ हजार टॉवरों पर ही यह खर्च 20 हजार करोड़ से 25 हजार करोड़ के बीच माना जा रहा है। इसके लिए पब्लिक–प्राइवेट पार्टनरशिप (पीपीपी) मॉडल की शरण लेनी होगी।

दूरसंचार के साथ–साथ मनोरंजन से संबंधित ढांचागत सुविधाओं का विकास भी तेजी से जारी है। केंद्र सरकार सेटेलाइट टेलीविज़न देखने के लिए डीटीएच (डायरेक्ट टू होम) सेवाओं को प्रोत्साहित कर रही है। इसकी वजह से गांवों में विकास का एक नया आयाम देखने को मिल रहा है।

ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी आधारित सेवा क्षेत्र का प्रसार भी तेजी से हो रहा है। ग्रामीण बीपीओ (कारोबारी सेवाओं की आउटसोर्सिंग) तेजी से लोकप्रिय हो रहे हैं। इनकी स्थापना न सिर्फ आईटी आधारित आधारभूत विकास को बढ़ावा दे रही है बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के नए अवसर भी सृजित कर रही है। देसीक्रू, विन्तेस, सोर्स पिलानी, हरवा, रूरल सोर्स, दाता हाली और इसी तरह के सैंकड़ों बीपीओ आज गांवों में चलाए जा रहे हैं। सॉर्स फॉर चेंज जैसे कुछ गैर–सरकारी संगठन गांवों में इस क्रांति को बढ़ावा देने में जुटे हैं। इस तरह के बीपीओ न सिर्फ सस्ते पड़ते हैं बल्कि यहां कार्यरत कर्मचारियों के बार–बार नौकरियां बदल लेने की आशंका भी नहीं रहती। प्रायः घरेलू सेवाओं (डोमेस्टिक) के लिए इनका प्रयोग तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। दिलचस्प बात यह है कि ग्रामीण बीपीओ में महिलाओं का दबदबा है। ज्यादातर बीपीओ की औसतन 60 फीसदी कर्मचारी महिलाएं हैं। कुछ में तो सौ फीसदी महिलाएं ही काम करती हैं। गांवों में जैसे–जैसे बिजली, पानी, सड़क, इंटरनेट, दूरसंचार आदि आधारभूत सुविधाओं का विकास हो रहा है, आईटी आधारित आउटसोर्सिंग उद्योग उसी रफ्तार से मजबूत हो रहा है। केंद्र सरकार अब ग्रामीण बीपीओ की स्थापना के लिए कुल लागत के 50 फीसदी तक का अनुदान भी देने लगी है।

इधर डिजिटल इंडिया के तहत ग्रामीण आधारभूत सुविधाओं को बढ़ावा देने के लिए केंद्र सरकार मौजूदा वित्त वर्ष में ही दस हजार करोड़ रुपये खर्च करने जा रही है। यह रकम यूनिवर्सल सर्विस ऑब्लीगेशन फंड (यूएसओएफ) से आएगी जिसके तहत पिछले साल 3000 करोड़ रुपये की राशि खर्च की गई थी। इस कोश के तहत 76,404 करोड़ रुपये की भारी–भरकम राशि मौजूद है जिसे अनेक वर्षों में खर्च किया जाना है।

केंद्रीय दूरसंचार मंत्री रविशंकर प्रसाद ने कुछ महीने पहले कहा था कि ग्रामीण भारत में डिजिटल आधारभूत ढांचे का विकास मूल रूप से फाइबर ऑप्टिक नेटवर्क की स्थापना (जिसके तहत ढाई लाख ग्राम पंचायतों को ऑप्टिकल फाइबर नेटवर्क से जोड़ा जाना है), संयुक्त सेवा केंद्रों, ग्रामीण बीपीओ और ग्रामीण डाकघरों से आएगा। ये सभी मिलकर ऐसे डिजिटल विकास की नींव रखेंगे जो भारत में आर्थिक, सामाजिक बदलाव का सूत्रपात करेगा।

(लेखक वरिष्ठ तकनीकविद् और स्तंभकार हैं।)
ई–मेल : balendudadhich@gmail.com

गांवों के बुनियादी विकास में पंचायतों की भूमिका

–सिद्धार्थ झा

निसंदेह पंचायतों की भूमिका अब इतनी सीमित नहीं है। उन्हें जरूरी अधिकार और धन दोनों ही चीजें मिल रही हैं जिसका असर अब जमीनी–स्तर पर दिखता है। जब कभी आप गांव की फिसलती सड़कों पर जाएं या 24 घंटे बिजली देखकर चौंक जाएं या गांव के पक्के मकान, लहलहाते खेत और उसकी समृद्धि देख आप ईर्ष्या करने पर मजबूर हो जाएं तो समझ लीजिए आप एक ऐसे जागरूक गांव में हैं जहां पंचायतें सिर्फ नाम की नहीं है और यहां यथार्थ में काम हो रहा है।

भारतीय समाज और शासन व्यवस्था में ग्राम पंचायत बहुत ही पुरानी अवधारणा है जिसके स्वरूप में समय के साथ–साथ बदलाव भी देखने को मिलता रहता है लेकिन निसंदेह ग्रामीण विकास में इसका एक अहम् योगदान रहा है। गांधी जी के शब्दों में अगर हम इसे समझने की कोशिश करे तो इसे बेहतर ढंग से समझा जा सकता है। भारत की आत्मा गांवों में बसती है। स्वतंत्रता से पूर्व उन्होंने पंचायती राज की कल्पना करते हुए कहा था कि सम्पूर्ण गांव में पंचायती राज होगा, उसके पास पूरी सत्ता और अधिकार होंगे। अर्थात सभी गांव अपने–अपने पैरों पर खड़े होंगे और अपनी जरूरतों की पूर्ति उन्हें स्वयं करनी होगी। साथ ही दुनिया के विरुद्ध अपनी रक्षा स्वयं करनी होगी यही ग्राम स्वराज में पंचायती राज हेतु मेरी अवधारणा है। देखिए, कितने सरल शब्दों में गांवो की प्रगति को हिंदुस्तान की प्रगति से जोड़ दिया। इसका मकसद था सत्ता की डोर को देश की संसद से लेकर गांवों की इकाई तक जोड़ना।

भारत को 'गांवों का देश' कहा जाता है जहां आज भी 70 प्रतिशत आबादी निवास करती है और आज देशभर में लगभग ढाई लाख ग्राम पंचायतें निरंतर भारत के विकास में अहम् भूमिका निभा रही हैं। महात्मा गांधी से पहले और उसके बाद भी ग्रामीण विकास के लिए निरंतर काम होते रहे हैं लेकिन गांधीजी ने एक दार्शनिक की तरह इस विचारधारा को विश्व के समक्ष रखा इसीलिए वो मील के पत्थर की तरह है और उनका ग्राम स्वराज दशकों बाद भी इतना ही प्रासंगिक है। क्योंकि इसमें गांवों की आत्मनिर्भरता की बात है, उनके सशक्तीकरण की बात है, शोषण के विरुद्ध एक ठोस नीति की बात है।

भारत में ग्रामीण विकास की प्रक्रिया पुरातनकाल से किसी ना किसी रूप में चलती आ रही है। अगर हम भारत के अतीत में झांके तो हमारे यहां प्राचीनकाल से ही पंचायती राज व्यवस्था अस्तित्व में रही है, भले ही इसे विभिन्न नाम से विभिन्न कालखंडों में जाना जाता रहा हो। भारत के प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थ ऋग्वेद में 'सभा' एवं 'समिति' के रूप में लोकतांत्रिक

स्वायत्तशासी संस्थाओं का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद ग्रंथ में 'ग्रामणी' शब्द भी आता है जो पंच का पर्याय है।

रामायण, महाभारत महाकाव्यों के काल में शासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम थे। गांव के पंच लोगों द्वारा स्थानीय जन से कर वसूल कर राजा का सहयोग करना वर्णित है। मनुस्मृति में भी मनु ग्राम के प्रशासन में स्वशासन का उल्लेख है। इसके अलावा कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी कम से कम 100 परिवार तथा अधिक से अधिक 500 परिवार के एक गांव की रचना का उल्लेख किया गया है।

इतिहास में ऐसे अनेक मौके आए जब केन्द्र में राजनैतिक उथल–पुथल के बावजूद सत्ता परिवर्तनों से निष्प्रभावित रहकर भी ग्रामीण–स्तर पर यह स्वायत्तशासी इकाइयां पंचायतें आदिकाल से निरंतर किसी न किसी रूप में कार्यरत रही हैं। इसी तरह मौर्यकाल, गुप्तकाल, सल्तनतकाल, मध्यकाल तथा ब्रिटिशकाल तक गांव के शासन में केन्द्र का हस्तक्षेप कम से कम था।

लेकिन ये भी सत्य है कि अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए राजाओं, शासकों, प्रशासनिक तंत्र, राजनीतिक तंत्र द्वारा इनका शोषण भी लगातार होता रहा है। अपनी–अपनी इच्छानुसार इनका दोहन भी किया गया।

ब्रिटिश शासनकाल में 1882 में तत्कालीन वायसराय लॉर्ड रिपन ने स्थानीय स्वायत्त शासन की स्थापना का प्रयास किया था, लेकिन वह सफल नहीं हो सका। 1947 में स्वतंत्रता से पूर्व सैकड़ों वर्षों के विदेशी शासन में यह ताना–बाना बिखर गया। लेकिन समय के साथ अंग्रेजी हुकूमत भी इस संस्थान के महत्व को समझ चुकी थी और निरर्थक भार अपने ऊपर वहन करने के पक्ष मे नहीं थी।

ब्रिटिश शासकों ने स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं की स्थिति पर जांच करने तथा उसके संबंध में सिफारिश करने के लिए 1882 तथा 1907 में शाही आयोग का गठन किया। इस आयोग ने स्वायत्त संस्थाओं के विकास पर बल दिया, जिसके कारण 1920 में संयुक्त प्रांत, असम, बंगाल, बिहार, मद्रास और पंजाब में पंचायतों की स्थापना के लिए कानून बनाए गए। लेकिन इस दौरान पंचायतों के अधिकारों में कमी आई और वो एक कमजोर संस्थान के रूप में उभरा जिसका नतीजा ये हुआ कि गांव लगातार बदहाल होते गए और आज़ादी के दशकों बाद भी हम उस खाई को पाट नहीं पाए हैं। निसंदेह इसका दोष कहीं–न–कहीं उन योजनाओं और प्रशासनिक तंत्र को जाता है जो कागजी योजनाओं को धरातल की वास्तविकता पर उतारने में असफल रहे।

'ग्राम स्वराज' के सपने को पूरा करने के लिए पूरे देश में विकेंद्रीकरण के माध्यम से पंचायतों का गठन किया गया। भारतीय संविधान में पंचायतों को विशेष महत्व देते हुए संविधान के अनुच्छेद 40 के नीति निर्देशक सिद्धांतों में उल्लेख किया गया है– ''सरकार ग्राम पंचायतों की स्थापना के लिए आवयश्क कदम उठाएगी एवं उन्हें ऐसी शक्तियां और अधिकारों से युक्त करेगी जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाई के रूप में सक्षम बनाने के लिए उपयुक्त हो।'' उपरोक्त पंक्तियों में गांधी जी के ग्रामीण सशक्तीकरण के सपनों को धरातल पर उतारने की झलक साफ देखी जा सकती है।

जनवरी 1957 में बलवंत राय मेहता समिति का गठन किया गया जो ग्रामीण आबादी की समस्याओं के अध्ययन के लिए बनी थी। इस कमेटी ने उसी वर्ष नवंबर में अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत की। समिति की सिफारिशों को स्वीकृत करते हुए इन संस्थाओं का नाम 'पंचायती राज' रखा गया।

स्वतंत्रता के बाद पंचायती राज की स्थापना भारत में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की अवधारणा को साकार करने के लिए महत्वपूर्ण कदम था। राजस्थान के नागौर जिले में पहली बार गांधीजी के सपनों के भारत की शुरुआत हुई जब 1959 में यहां पर पंचायती राज व्यवस्था बलवंत राय समिति की सिफारिशों के अनुरूप लागू की गईं। इस दौर का भारत वर्तमान भारत से बहुत अलग था। आज़ादी मिले एक दशक हो चुका था लेकिन घोर गरीबी, अशिक्षा, भुखमरी, महामारी, अंधविश्वास, जात–पात, छुआछुत जैसी असंख्य बीमारियां गांव के रग–रग में बस चुकी थी। महिलाओं और बच्चियों की दुर्दशा का वर्णन करना भी कठिन है। ऐसे में पंचायती राज एक उम्मीद की किरण बनकर उभरा। पंचायती राज का उद्देश्य गांवों को स्वाबलंबी बनाना था। इस व्यवस्था को राष्ट्रवादी चिंतक पंडित दीनदयाल उपाध्याय के विचारों से भी समझा जा सकता है जिसमें 'अंत्योदय' की बात कही गई है। यानी समाज के अंतिम छोर पर खड़े मनुष्य तक भी प्रगति का लाभ पहुंचाना और अंतिम छोड़ पर खड़ा मनुष्य वो है जो गांव मे बसता है, खेतों, खलिहानों में काम करता है।

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने अपने एक भाषण में बेहिचक ये स्वीकार किया था कि हमारे नीति निर्माताओ और अधिकारियों को आदत हो गई है चोटी पर से नीचे समस्या को देखने की जबकि जरूरत है समस्या को नीचे से ऊपर देखा जाए। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा राजस्थान के नागौर जिले के बगदरी गांव में 2 अक्तूबर, 1959 को पंचायती राज व्यवस्था लागू की गई। इसके बाद धीरे–धीरे पूरे भारत में इस प्रणाली को अपनाया गया। लेकिन इसको आशानुरूप सफलता नहीं मिली क्योंकि धन के लिए राज्यों पर आश्रित होने और संस्थान के अन्य सदस्यों के बीच मतभेद की समस्याएं थी। इसके लिए समय–समय पर संशोधन भी हुए जो पंचायती राज व्यवस्था के लिए जरूरी थे लेकिन 24 अप्रैल, 1993 को पंचायती राज के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया

गया था क्योंकि इसी दिन संविधान मे 73वें संशोधन के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा हासिल कराया गया और इस तरह महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज के स्वप्न को वास्तविकता में बदलने की दिशा में एक कदम और बढ़ाया गया जिसके अंतर्गत एक त्रि–स्तरीय ढांचे की स्थापना की गई। ये संशोधन अशोक मेहता समिति की सिफारिशों के अनुरूप था जिसके अंतर्गत ग्राम–स्तर पर ग्रामसभा की स्थापना की प्रस्तावना की गई थी और ये भी सुनिश्चित किया गया कि हर पांच साल में पंचायतों के नियमित चुनाव होंगे और इस तरह के कई अन्य महत्वपूर्ण सुझाव भी थे जिसने इस संस्थान को मजबूती प्रदान की। 73वें और 74वें संविधान संशोधन ने पंचायती राज और नगरपालिकाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया। अब त्रि–स्तरीय प्रणाली आरम्भ की गई जिसमें ग्रामसभा सबसे उच्च संस्था, पंचायत समिति मध्य में और सबसे निचले स्तर पर ग्राम पंचायत का गठन किया गया। भारतीय लोकतांत्रिक संरचना में शासन के तीसरे स्थानीय स्तर पर पंचायती राज प्रणाली में ग्रामसभा प्रत्यक्ष लोकतंत्र का प्रतीक है जिसमें अपेक्षा की गई थी कि स्थानीय जनसहभागिता के माध्यम से गांवों का विकास किया जाएगा। ग्राम पंचायतों और ग्रामसभा के बीच वही संबंध होगा जो मंत्रिमंडल और विधानसभा का होता है। 73वें संविधान संशोधन में ज़मीनी–स्तर पर जन संसद के रूप में ऐसी सशक्त ग्रामसभा की परिकल्पना की गई है जिसके प्रति ग्राम पंचायत जवाबदेह हो। इस तरह सुधारों के दौर से गुजरती हुई पंचायती राज व्यवस्था मुकम्मल अवस्था में पहुंच गई। हम सभी जानते हैं खेती–किसानी भारतीय अर्थव्यवस्था की नींव है और किसानों की उसमें महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ये किसान सालभर में दो या कहीं–कहीं 3 फसलें उपजा पाने में कामयाब भी होते हैं लेकिन ये गांव जितने छोटे दिखते हैं उनकी समस्याएं उतनी ही विकराल और बड़ी हैं। जैसाकि पहले ही बताया गरीबी, अशिक्षा, भुखमरी, बाढ़ या सुखाड़, खराब स्वास्थ्य सेवाओं से हमारे गांव लंबे समय तक बेहाल रहे हैं। ऐसा नहीं है कि इस तस्वीर में अभी भी बहुत ज्यादा बदलाव आया है लेकिन इतना जरूर है कि युद्धस्तर पर प्रयास केंद्र और राज्य सरकारों के द्वारा किए जा रहे हैं।

केंद्र या राज्यों की योजनाएं तभी सफल हो सकती हैं जब पंचायतें इसे पूरे मनोयोग से लागू करें। ग्राम पंचायतें अपनी विभिन्न समितियों के माध्यम से गांव में विकास कार्यों को संचालित करती हैं जैसे नियोजन एवं विकास समिति, निर्माण एवं कार्य समिति, शिक्षा समिति, जल प्रबंधन समिति समेत अनेक समितियां होती हैं जो ग्रामीण विकास से जुड़े मुद्दों की देखरेख करती हैं। अगर हम ग्राम पंचायत के कामों को देखे तो इनके अधिकार क्षेत्र में ग्राम विकास संबंधी अनेक कार्य हैं जैसे कृषि, पशुधन, युवा कल्याण, चिकित्सा, रखरखाव, छात्रवृत्तियां, राशन की दुकानों के आवंटन जैसे छोटे–बड़े बहुत से महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जिसके लिए उन्हें किसी और का मुंह नहीं ताकना होता है।

गांव में स्वच्छ पेयजल और खेतों के लिए पानी का प्रबंधन काफी चुनौतीपूर्ण काम है। इस काम में पंचायतों की भूमिका बड़ी हो जाती है क्योंकि ज्यादातर झगड़े पानी के असमान वितरण को लेकर होते हैं। मनरेगा के माध्यम से पोखर, तालाब, कुओं का निर्माण किया जा रहा है जिससे इस तरह के भयावह हालात नहीं आए।

ग्रामीणों को शीघ्र न्याय–ग्राम न्यायालय अधिनियम 2008 केंद्र सरकार के एक महत्वपूर्ण फैसले के अनुसार पंचायत–स्तर पर ही ग्राम न्यायलय की स्थापना भी की गई। जिससे अदालतों के ऊपर से मुकदमों का कुछ बोझ तो कम हुआ ही; साथ ही, गरीब ग्रामीण को बिना दूरदराज में बने न्यायालयों के चक्कर लगाए, कम खर्च में शीघ्र न्याय भी मिलता है इन ग्राम न्यायालयों में भी पंचायतों की प्रमुख भागीदारी रहती है।

ये पंचायतें न सिर्फ खेती–किसानी या अन्न भंडारण में ग्रामीणों की मदद करती हैं। ऐसे कई उदाहरण हैं जहां पंचायतों ने अभूतपूर्व प्रयास करते हुए गांवों मे बने हस्तशिल्प को न केवल विश्व मंच तक पहुंचाने में मदद की है बल्कि एक बाजार विकसित किया है। वर्तमान सरकार की ऐसी अनेक योजनाएं हैं जो गांवों को आत्मनिर्भर बना रही हैं लेकिन सरकार की बड़ी योजनाएं स्किल इंडिया, स्टैंडअप इंडिया को जन–जन तक पहुंचाने में पंचायतों की उल्लेखनीय भागीदारी जरूरी है। इस बार के बजट में भी ग्राम पंचायतों और नगरपालिकाओं को अनुदान के रूप में 2.87 लाख करोड़ रुपये आवंटित किए गए जोकि 14वें वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुसार किया गया है। पंचायती राज संस्थानों की मदद के लिए नई योजना राष्ट्रीय ग्राम स्वराज अभियान का भी प्रस्ताव किया गया है।

सामाजिक अभियानों में पंचायतों की भागीदारी– स्वच्छ भारत अभियान का असर देशव्यापी पूरी दुनिया ने देखा। 60 प्रतिशत भारतीय 2 वर्ष पूर्व तक खुले मे शौच कर रहा था लेकिन पंचायतों ने विभिन्न जन–जागृति अभियानों के माध्यम से गांवों में उल्लेखनीय कार्य किया है। इसी का नतीजा है कि आज घर–घर शौचालय है। स्वच्छ ईंधन की दिशा में हम बहुत आगे तक आ चुके हैं। निसंदेह इसके लिए पंचायते न्यायवाद का पात्र हैं।

आज शिक्षा का अधिकार कानून के तहत हर गांव में स्कूलों का सफलतापूर्वक संचालन हो रहा है। उसमें भी पंचायतों की बड़ी भूमिका है जिसकी देखरेख में ये योजनाएं फलफूल रही हैं। मनरेगा के तहत पंचायतों को ना केवल ग्रामीणों को सौ दिन रोजगार देने का अधिकार प्राप्त हुआ बल्कि इसके माध्यम

से अनेक निर्माण कार्य– क्या होना है, कहां होना है ये हक भी मिला।

महिलाओं की भागीदारी– पिछले कुछ वर्षों में महिलाएं भी ग्राम पंचायत–स्तर पर काफी सक्रिय हुई हैं। हालांकि ये बात भी किसी से छुपी नहीं है कि कई गांवों में आज भी महिला सरपंचों के पति उनकी जगह पर सत्ता की बागडोर संभालते हैं लेकिन इसके बावजूद कई गांवों में महिलाओं की भूमिका मजबूत होने से माहौल बेहतर हुआ है और लड़कियों के प्रति भेदभाव के रवैये की घटनाओं में भी कमी देखने को मिली है। देश के कई राज्यों में गांवों का नेतृत्व अब कुछ ऐसे पढ़े–लिखे हुनरमंद लोगों के हाथों में है जो किसी मल्टीनेशनल कंपनी तक को चलाने का हुनर रखते हैं। राजस्थान में एक मैनेजमेंट प्रोफेशनल छवि राजावत ने ग्रामसभा में प्रबंधन की मिसाल दुनिया के सामने पेश की है। ऐसे लोग न सिर्फ नए विचार और उपाय गांवों में ला रहे हैं बल्कि सोशल मीडिया जैसे नए माध्यमों का इस्तेमाल कर दुनिया से सीधे जुड़ भी रहे हैं।

ई–पंचायत– ग्राम पंचायतों को हाईटेक करना डिजिटल इंडिया बनाने की दिशा में एक अहम् कदम है जिससे लोगों को पंचायत–स्तर पर ही ई–गवर्नेंस की सुविधाएं मिल सकें। किसी भी सुविधा के लिए ग्रामीण लोग पंचायत से ही आवेदन कर सकें, इसके लिए पंचायत भवनों में ही अलग कक्ष बनाए गए हैं। ई–पंचायत के जरिए लोग जान सकेंगे कि ग्राम विकास के लिए कितना पैसा आया, कहां खर्च हुआ, कौन–कौन से काम होने हैं, मनरेगा और वो तमाम जानकारियां क्योंकि इस पर सभी विवरण दर्ज होंगे। ई–पंचायत न सिर्फ सशक्त भारत की दिशा मे एक महत्वपूर्ण कदम है बल्कि इससे भ्रष्टाचार–मुक्त समाज बनाने की दिशा मे भी काफी सहयोग मिलेगा जिसके लिए वर्तमान सरकार प्रतिबद्ध है। पंचायती राज मंत्रालय द्वारा राष्ट्रव्यापी सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में ये एक अनूठी पहल है जिसके द्वारा देश की 2.45 लाख पंचायतों के कार्यों का स्वचालन करना है।

निसंदेह पंचायतों की भूमिका अब इतनी सीमित नहीं है उन्हें जरूरी अधिकार और धन दोनों ही चीजें मिल रही हैं जिसका असर अब ज़मीनी–स्तर पर दिखता है। जब कभी आप गांव की फिसलती सड़कों पर जाएं या 24 घंटे बिजली देखकर चौंक जाएं या गांव के पक्के मकान, लहलहाते खेत और उसकी समृद्धि देख आप ईर्ष्या करने पर मजबूर हो जाएं तो समझ लीजिए आप एक ऐसे जागरूक गांव में हैं जहां पंचायतें सिर्फ नाम की नहीं है और यहां यथार्थ में काम हो रहा है ऐसे ईर्ष्या के अवसर मुझे बहुत बार–बार मिले हैं जब कभी मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार या हरियाणा के गांवों को करीब से जानने का मौका मिला है। ज्यादातर गांवों की महिला सरपंच न सिर्फ गांव में खुशहाली लाई हैं बल्कि अंधविश्वास, रुढ़ियों को भी तोड़ा है, समाज को एक सूत्र में बांधने का काम किया है। कभी–कभार खाप पंचायतों की खबरें भी आपको पढ़ने को मिलती होंगी लेकिन इन खाप पंचायतों को कोई संवैधानिक दर्जा नहीं मिला हुआ इसलिए पंचायतों से उनकी तुलना न करें। पंचायती राज व्यवस्था को लागू हुए छह दशक होने को आए हैं। इसके तहत ग्राम विकास तो हुआ है लेकिन इसको अभी मीलों लंबा सफर तय करना है खासतौर से पूर्वोतर भारत के राज्यों में। उम्मीद की जानी चाहिए कि पंचायतों के अधिकार बढ़ने और उन्हें क्षेत्र विकास के लिए धनराशि आवंटित किए जाने के जो निर्णय लिए गए हैं, उन सुधारों का सकारात्मक असर गांवों पर देखने को मिलेगा लेकिन शत–प्रतिशत सफलता तभी मिलेगी जब गांवों में ही रोजगार और उच्च शिक्षा के अवसर देखने को मिलेंगे जिससे गांवों से शहरों की ओर पलायन थमेगा। निसंदेह ऐसे भविष्य की आशा की जा सकती है।

(स्वतंत्र पत्रकार एवं कंसल्टेंट)
ई–मेल : jha.air.sidharath@gmail.com

गांवों में शिक्षा हेतु बुनियादी सुविधाओं का अवलोकन

–प्रमोद जोशी

शिक्षा का अधिकार कानून (आरटीई) लागू होने के बाद स्कूलों की संख्या और उनमें दाखिले में भारी बढ़ोतरी हुई है, पर पढ़ाई–लिखाई की गुणवत्ता गिरी है। आरटीई का सकारात्मक असर है कि 6–14 वर्ष उम्र वर्ग के बच्चों के स्कूल में दाखिले में भारी इजाफा हुआ है, पर बच्चे स्कूलों में साधारण कौशल भी नहीं सीख पा रहे हैं।

शिक्षा सामान्य नागरिक के लिए दुनिया का दरवाजा खोलती है। पारम्परिक रूप से हमें शुरुआती शिक्षा परिवार, पड़ोस और आसपास के माहौल से मिलती है। यह परिस्थिति सामाजिक असमानता के कारण यों भी बिगड़ी हुई है, पर इसका विस्तार होते ही खराबियां विकृत रूप में सामने आने लगती हैं। सामान्य व्यक्ति को भरोसा होना चाहिए कि शिक्षा से उसका जीवन बदलेगा। हरितक्रांति के दौरान, सफल किसान बनने के लिए तकनीकी जानकारी और शिक्षा की कीमत बढ़ी थी।

हाल में लड़कियों की रोजगार सम्भावनाओं में नाटकीय बदलाव आने से भी शिक्षा ने सामाजिक क्रांति को जन्म दिया। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के रॉबर्ट जेनसेन ने उत्तर भारत के तीन राज्यों के कुछ गांवों में, जहां आमतौर पर भर्ती करने वाले नहीं जाते, सन 2002 में लड़कियों के रिक्रूटिंग सेशन किए। इन गांवों से बीपीओ जाने वाली लड़कियों की संख्या बढ़ी। यह इलाका स्त्रियों के प्रति भेदभाव के लिए कुख्यात है।

नौकरी की भर्ती शुरू होने के तीन साल बाद उनके गांवों में पांच से ग्यारह साल के बीच की लड़कियों के स्कूल जाने की सम्भावनाओं में पांच फीसदी अंकों का इजाफा हो गया। उनके वज़न में भी वृद्धि हुई, माता–पिता उनकी देखरेख बेहतर करने लगे। उन्हें समझ में आया कि लड़कियों को पढ़ाने का एक आर्थिक मूल्य है। इस तरह शिक्षा एक सामाजिक क्रांति को जन्म दे रही है। पर हमारी सामाजिक दशा को देखते हुए काफी काम करने की जरूरत है।

सामाजिक, आर्थिक और जाति जनगणना (एसईसीसी)–2011 के मुताबिक भारत में 88.4 करोड़ से भी ज्यादा की ग्रामीण आबादी में से 36 फीसदी निरक्षर हैं यानी 31.57 करोड़ लोग निरक्षर हैं। दुनिया के किसी भी देश में निरक्षरों की यह सबसे बड़ी संख्या है। यह निरक्षर ग्रामीण भारत इंडोनेशिया की पूरी आबादी से भी ज्यादा है जो दुनिया का चौथा सबसे बड़ी आबादी वाला देश है। पाकिस्तान की पूरी जनसंख्या की तुलना में निरक्षर ग्रामीण भारत दुगुना बड़ा है।

ये केवल निरक्षरता के आंकड़े हैं। ये इसलिए भी महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ये 2011 की जनगणना में हासिल आंकड़ों से ज्यादा भयावह हैं। जनगणना में यह प्रतिशत 32.2 बताया गया था। भारत में शिक्षा की सीढ़ी कुछ इस तरह बनती है, 1. प्री–प्राइमरी, 2. प्राइमरी, 3. सेकेंडरी (टेक्नीकल आईटीआई), 4. उच्च शिक्षा, जिसके समानांतर तकनीकी शिक्षा के अलग–अलग स्तर हैं। ग्रामीण–स्तर पर हमें इनमें से केवल प्राइमरी शिक्षा नजर आती है। कुछ इलाकों में माध्यमिक शिक्षा और उसके समानांतर आईटीआई भी उपलब्ध हैं, पर यह उन्हीं इलाकों में है, जहां विकास अपेक्षाकृत बेहतर है।

पश्चिमी देशों में सामान्य रूप से के–12 को शिक्षा का बुनियादी तत्व समझा जाता है। 'किंडरगार्टेन टू 12' किसी को जागरूक नागरिक बनाने के लिए जरूरी है। पर अभी हम साक्षरता यानी अक्षर ज्ञान को शिक्षा की कसौटी मानकर चल रहे हैं। दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि ग्रामीण शिक्षा मूलतः सरकारी कार्यक्रमों पर निर्भर है। ग्रामीण शिक्षा पर निजी पूंजी निवेश लगभग नहीं के बराबर है। छोटे स्थानीय कारोबारियों ने जो स्कूल खोले हैं, उन्हें ही इसमें शामिल किया जा सकता है।

जनगणना के वर्ष 2015 के अनुमान बताते हैं कि भारत में 0–24 वर्ष की आबादी 57.2 करोड़ है। भारत में कक्षा 12 तक की शिक्षा के नेटवर्क में तकरीबन 15 लाख स्कूल जुड़े हैं, जिनमें 25 करोड़ बच्चे शिक्षा पा रहे हैं। इंडिया रेटिंग्स के अनुसार भारत में 133 अरब डॉलर का शिक्षा बाजार है, जिसमें से करीब 56 अरब डॉलर का निजी निवेश शिक्षा पर हुआ है। पर यह ज्यादातर निवेश शहरी शिक्षा पर है और इसका काफी बड़ा हिस्सा इंजीनियरी, मेडिकल और अन्य तकनीकी शिक्षा पर है।

भारत और चीन की तुलना करें तो पाएंगे कि चीन ने अपनी

प्राथमिक और ग्रामीण शिक्षा पर ज्यादा ध्यान दिया। भारत को आईआईटी और इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस जैसी संस्थाएं स्थापित करने का श्रेय जाता है, पर एक लम्बे समय तक हमारी ग्रामीण शिक्षा की अनदेखी हुई या यों कहें उस तरफ कम ध्यान दिया गया। इस वजह से ग्रामीण शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के बजाय ह्रास होता गया।

ग्रामीण क्षेत्र के सरकारी स्कूलों की दशा खासतौर से काफी खराब हो गई। आय, लिंग, सामाजिक समूहों और भौगोलिक आधार पर असमानताएं भी पैदा होती गईं। बावजूद इस तथ्य के कि व्यक्ति के जीवन–स्तर में शिक्षा के मार्फत भारी बदलाव लाया जा सकता है, पढ़ाई की ओर आबादी के बड़े हिस्से का ध्यान खींचने में समय रहते सफलता नहीं मिली। ग्रामीण प्राइमरी स्कूलों में जाने वाले 50 फीसदी बच्चे पांचवें दर्ज में आने के पहले और 80 फीसदी छात्र आठवें दर्जे में आने के पहले स्कूल जाना बंद कर चुके होते हैं।

शिक्षा–केंद्रित भारतीय एनजीओ 'प्रथम' की सालाना रिपोर्ट 'असर' से पता लगता है कि शिक्षा का अधिकार कानून (आरटीई) लागू होने के बाद स्कूलों की संख्या और उनमें दाखिले में भारी बढ़ोतरी हुई है, पर पढ़ाई–लिखाई की गुणवत्ता गिरी है। आरटीई का सकारात्मक असर है कि 6–14 वर्ष उम्र वर्ग के बच्चों के स्कूल में दाखिले में भारी इजाफा हुआ है, पर बच्चे स्कूलों में साधारण कौशल भी नहीं सीख पा रहे हैं।

सन 2005 में पहले 'असर' सर्वे से पता लगा कि देश में 6 से 14 साल के 93.4 फीसदी बच्चों के नाम स्कूलों में लिखे हैं, पर कक्षा 4 में पढ़ने वाले 47 फीसदी बच्चे ही कक्षा 2 का पाठ पढ़ पाते हैं। सर्वे के अनुसार सरकारी स्कूलों पर आम जनता का विश्वास घट रहा है। सन 2015 में देशभर में 64.4 फीसदी बच्चे सरकारी स्कूलों में और 30.8 फीसदी बच्चे निजी स्कूलों में जा रहे थे। उससे पिछले साल निजी स्कूल जाने वाले बच्चों का प्रतिशत 29 फीसदी था। पर पांच राज्य ऐसे हैं जहां 50 फीसदी से ज्यादा बच्चे निजी स्कूलों में जाते हैं। ये राज्य हैं– मणिपुर, केरल, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और मेघालय।

प्राइवेट स्कूलों को लोग क्यों महत्व देते हैं? वे भी घटिया हैं, पर जब हम सरकारी स्कूल में होने वाले हस्तक्षेपों को देखते हैं तब अंतर का पता लगता है। एक–दो कमरों के इन स्कूलों के भवन सरकारी स्कूलों से खराब हैं, पर वहां शिक्षकों की उपस्थिति बेहतर है। वे कम वेतन पाते हैं पर उनका मुख्य काम पढ़ाना है। ऐसा नहीं कि सरकारी शिक्षक पढ़ाना नहीं चाहते।

अभिजित बनर्जी और एस्थर ड्यूफ्लो ने अपनी किताब 'पुअर इकोनॉमिक्स' में लिखा है कि देश के सबसे गरीब प्रदेशों में से एक उत्तर प्रदेश के पूर्वी क्षेत्र के जौनपुर जिले में 'प्रथम' के कार्यकर्ताओं ने गांव–गांव जाकर बच्चों का परीक्षण किया और समुदायों को प्रेरित किया कि वे खुद देखें कि उनके बच्चे कितना जानते हैं और कितना नहीं जानते हैं। अंततः उनके बीच से ही अपने भाइयों–बहनों की मदद के लिए स्वयंसेवक निकले। वे कॉलेज छात्र थे, जो शाम को क्लॉस लगाते थे। इस कार्यक्रम के पूरा होने पर सभी प्रतिभागी बच्चे, जो इसके पहले पढ़ नहीं पाते थे, कम से कम अक्षरों को पहचानने लगे।

इसी तरह भारत के सबसे गरीब और अध्यापकों की सबसे ज्यादा गैर–हाजिरी की दर वाले प्रदेश बिहार में 'प्रथम' ने सुधारात्मक ग्रीष्मकालीन कैम्पों की शृंखला आयोजित की। इनमें सरकारी विद्यालयों के अध्यापकों को पढ़ाने के लिए आमंत्रित किया गया। इस मूल्यांकन के परिणाम आश्चर्यजनक थे। बदनाम सरकारी अध्यापकों ने वास्तव में अच्छा पढ़ाया और इसके परिणाम जौनपुर की ईवनिंग क्लासेज जैसे ही थे। जाहिर है हमें ऐसे ही आंदोलनों की जरूरत है।

ग्रामीण क्षेत्रों में निजी स्कूलों पर जनता का विश्वास बढ़ने के बावजूद शिक्षा पर निजी पूंजी का निवेश ग्रामीण शिक्षा पर निजी निवेश सकल वेंचर कैपिटल के 2 फीसदी से भी कम है। ऐसा इसलिए नहीं है कि ग्रामीण आबादी की क्षमता फीस देने की नहीं है। गांव के अपेक्षाकृत साधन सम्पन्न लोग अपने बच्चों को शहर भेजते हैं। लड़कियों की शिक्षा पर और ज्यादा विपरीत प्रभाव पड़ता है, क्योंकि उन्हें बाहर भेजने या दूर तक भेजने को काफी लोग तैयार नहीं होते।

शिक्षा पर निवेश का लाभ देर से मिलता है। इस वजह से ड्रॉपआउट रेट काफी ज्यादा है। देश में स्कूल जाने लायक उम्र के 36 करोड़ बच्चों में से 25 करोड़ के नाम ही स्कूलों में दर्ज हैं। पर जैसे ही बच्चों की कारोबारी शिक्षा पाने की उम्र आती है, 25 करोड़ की जगह 2.8 करोड़ रह जाते हैं (कुल नामांकन रेशो (जीईआर) उच्च शिक्षा, भारत 2015)। बावजूद इन बातों के देश में मध्यवर्ग और निम्न मध्यवर्ग का विस्तार हो रहा है, जिसके पास बच्चों को पढ़ाने के लिए पैसा है।

सरकारी भूमिका भी पहले से बेहतर हुई है। सरकारी और गैर–सरकारी संयुक्त प्रयास भी बढ़े हैं। देश के निजी क्षेत्र को ऐसे व्यावसायिक मॉडल तैयार करने चाहिए, जिनसे ग्रामीण क्षेत्र में कम से कम 12 वें दर्जे तक की गुणात्मक शिक्षा और आईटीआई जैसी कारोबारी शिक्षा का इंतजाम हो सके। सन् 2009 में भारतीय संसद ने 'शिक्षा के अधिकार' का कानून पास किया, जिसके बाद 6 से 14 साल की उम्र के बच्चों को शिक्षा पाने का बुनियादी अधिकार मिल गया है। इसके अंतर्गत सभी प्राइवेट स्कूलों को 25 फीसदी सीटें गरीब छात्रों के लिए आरक्षित रखने की व्यवस्था है। इन छात्रों का खर्च सैद्धांतिक रूप से, सरकारी और गैर–सरकारी भागीदारी की व्यवस्था के तहत सरकार उठाएगी। यह व्यवस्था ठीक से लागू की जाए तो ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा के बुनियादी ढांचे को बेहतर बनाया जा सकता है। पर इसे लेकर ही कई प्रकार के संदेह हैं। शिक्षा के अधिकार की व्यवस्था को लागू हुए 7 साल हो गए हैं, पर इसके परिणाम अलग–अलग राज्यों में अलग–अलग हैं। खासतौर से 25 फीसदी गरीब छात्रों को प्रवेश देने वाली व्यवस्था को कारगर

विद्यालय शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार

भारत में स्कूल जाने वाले 6–18 वर्ष की आयु वर्ग की 30.5 करोड़ की (2011 की जनगणना के अनुसार) विशाल जनसंख्या है, जो कुल जनसंख्या का 25 प्रतिशत से अधिक है। यदि बच्चों को वास्तविक दुनिया का आत्मविश्वास से सामना करने की शिक्षा दी जाए तो भारत में इस जनसांख्यिकीय हिस्से के संपूर्ण सामर्थ्य का अपने लिए उपयोग करने की क्षमता है।

राज्य सरकारों की साझेदारी के साथ केंद्र द्वारा प्रायोजित एवं भारत सरकार द्वारा कार्यान्वित सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) ने आरम्भिक शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने में यथेष्ट सफलता पाई है। आज देश के 14.5 लाख प्राथमिक विद्यालयों में 19.67 करोड़ बच्चे दाखिल हैं। स्कूली शिक्षा को बीच में छोड़ कर जाने की दर में यथेष्ट कमी आई है, किंतु यह अब भी प्राथमिक स्तर पर 16 प्रतिशत एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर 32 प्रतिशत बनी हुई है, जिसमें उल्लेखनीय कमी करना आवश्यक है। एक सर्वेक्षण के अनुसार विद्यालयों से बाहर बच्चों की संख्या वर्ष 2005 में 135 लाख से घटकर वर्ष 2014 में 61 लाख हो गई, अंतिम बच्चे की भी विद्यालय में वापसी सुनिश्चित करने हेतु संपूर्ण प्रयास किए जाने चाहिए।

जैसाकि स्पष्ट है कि भारत ने स्कूलिंग में निष्पक्षता एवं अभिगम्यता सुनिश्चित करने के मामले में अच्छा प्रदर्शन किया है। हालांकि एक औसत छात्र में ज्ञान का स्तर चिंता का विषय है। राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण (एनएएस) की पांचवीं कक्षा के छात्रों की एक ताजा रिपोर्ट के मुताबिक पढ़ पाने की समझ से जुड़े प्रश्नों के आधे से अधिक प्रश्नों के सही जवाब दे पाने वाले छात्रों का प्रतिशत केवल 36 था एवं इस संबंध में गणित एवं पर्यावरण अध्ययन का आंकड़ा क्रमशः 37 एवं 46 प्रतिशत है।

विद्यालयों में शिक्षा की गुणवत्ता के स्तर को सुधारने के लिये केंद्र एवं राज्य दोनों सरकारें नवीन व्यापक दृष्टिकोण एवं रणनीतियां बना रहे हैं। कुछ विशेष कार्यक्षेत्रों की बात करें तो अध्यापकों, कक्षा कक्ष में अपनाई जाने वाली कार्यविधियों, छात्रों में ज्ञान के मूल्यांकन एवं निर्धारण, विद्यालयी अवसंरचना, विद्यालयी प्रभावशीलता एवं सामाजिक सहभागिता से संबंधित मुद्दों पर कार्य किया जाना है।

विद्यालयों का विभिन्न आयामों में निरंतर मूल्यांकन किए जाने की आवश्यकता है ताकि सुधार की आवश्यकता का समावेशन किया जा सके। गुजरात में गुणोत्सव, मध्यप्रदेश में प्रतिभा पर्व, राजस्थान में सम्बलन और ओडिशा में समीक्षा जैसी पहल बेहतर उदाहरण हैं। एनयूईपीए द्वारा राष्ट्रीय–स्तर पर शाला सिद्दी नामक एक व्यापक विद्यालय मूल्यांकन प्रारूप को तैयार किया गया है और नवंबर 2016 में इसकी शुरुआत कर दी गई है। यह आत्म–मूल्यांकन और तीसरे पक्ष के मूल्यांकन का एक घटक है। अपनी सुधार योजनाओं को कार्यान्वित करने और उन्हें बनाने के लिए विद्यालयों के द्वारा आत्म–मूल्यांकन का उपयोग किया जाएगा।

छात्रों और शिक्षकों का समक्ष आधार डाटा बनाने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं। इससे बच्चों के एक कक्षा से अगली कक्षा में जाने की प्रक्रिया पर निगरानी रखी जाएगी और इस प्रकार से स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की पहचान के लिए प्रणाली को सक्षम बनाया जाएगा और यह सुनिश्चित किया जाएगा कि सभी पात्र बच्चे मध्याह्न भोजन, पाठ्यपुस्तकें और छात्रवृत्तियों को प्राप्त करने के साथ–साथ छात्र और शिक्षक की उपस्थिति की निगरानी भी की जाएगी।

सर्व शिक्षा अभियान और राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के अंतर्गत विभिन्न हस्तक्षेपों के माध्यम से विद्यालय के बुनियादी ढांचे के प्रावधानों के तहत उल्लेखनीय प्रगति हुई है। एसएसए के प्रारंभ होने के बाद से 2.23 लाख प्राथमिक और करीब 4 उच्च प्राथमिक विद्यालयों के लिए विद्यालय भवन तैयार किए गए हैं। प्रत्येक विद्यालय में छात्राओं और छात्रों के लिए एक पृथक कार्यात्मक शौचालय होने के प्रधानमंत्री के आह्वान पर राज्यों, संघशासित प्रदेशों, केंद्रीय सार्वजनिक क्षेत्र की इकाईयों और निजी संस्थानों ने सकारात्मक प्रतिक्रया व्यक्त की है। स्वच्छ विद्यालय पहल के अंतर्गत 4.17 लाख शौचालयों का निर्माण किया जा चुका है। शौचालयों को स्वच्छ, कार्यात्मक और बेहतर बनाए रखने को सुनिश्चित करने की दिशा में भी कदम उठाए जा रहे हैं।

विद्यालय शिक्षा के मामले में समुदाय विद्यालय प्रबंधन समितियों के माध्यम से विद्यालय प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। अब तक इन समितियों को विद्यालय भवन के निर्माण जैसी गतिविधियों के प्रावधानों में शामिल किया जा चुका है। इससे आगे बढ़ते हुए विद्यालय समितियों को मजबूत किये जाने की आवश्यकता होगी ताकि वे बच्चों के शिक्षण के लिए विद्यालय की जवाबदेही पर भी अपना नियंत्रण कर सकें। माता–पिताओं और एसएमसी सदस्यों को कक्षावार शिक्षण लक्ष्यों के प्रति जागरूक रहने की आवश्यकता होगी।

तरीके से लागू नहीं किया जा सका है। दूसरी तरफ, इस दिशा में सरकारों का निवेश अपर्याप्त होने के साथ–साथ अकुशल भी है। यह व्यवस्था तब तक ठीक से लागू नहीं होगी, जबतक शिक्षा के इंफ्रास्ट्रक्चर पर भारी निवेश न किया जाए।

इसमें दो राय नहीं कि हम तेज आर्थिक विकास की राह पर तब तक नहीं बढ़ सकते जब तक शिक्षा की उम्र (5–25) के बच्चों और किशोरों को जागरूक, कुशल और क्षमतावान न बनाया जाए। हम एक सीमा तक सफल हुए भी हैं तो बड़े और मझोले शहरों में शिक्षा का इंफ्रास्ट्रक्चर बना पाए हैं वह भी अपर्याप्त। पर ग्रामीण क्षेत्रों में तो वह और भी खराब है। हम अमेरिका और पश्चिमी यूरोप के देशों से तुलना करें तो यह बात समझ में आएगी कि उनके आर्थिक–सामाजिक विकास के पीछे शिक्षा से जुड़ी नीतियां हैं।

उत्तरी अमेरिका और पश्चिमी यूरोप के देशों में शिक्षा पर आने वाला सार्वजनिक व्यय सारी दुनिया के व्यय के आधे से ज्यादा है, जबकि इन देशों में शिक्षा की उम्र (5–25) वाले बच्चों और युवाओं की संख्या इसी वर्ग की वैश्विक संख्या का 10 फीसदी है। अमेरिका के पास इस वर्ग में 4 फीसदी जनसंख्या है और उसका व्यय वैश्विक व्यय का तकरीबन एक चौथाई है। इसके विपरीत भारत का सकल व्यय वैश्विक व्यय का 5.2 फीसदी है, जबकि हमारे पास इस वर्ग की आबादी वैश्विक आबादी की 20 फीसदी है।

भारत में शिक्षा पर होने वाले सकल व्यय की 0.8 फीसदी राशि पूंजीगत व्यय पर जाती है और अध्यापकों तथा कर्मचारियों के वेतन पर 80 फीसदी। यानी इंफ्रास्ट्रक्चर के लिए बहुत थोड़ी रकम बचती है। यों भी हमारा सकल व्यय काफी कम है उसमें से इंफ्रास्ट्रक्चर पर व्यय और भी कम है। इस व्यय को भी शहरी और ग्रामीण वर्गों में देखेंगे तो पाएंगे कि दशा दयनीय है।

बच्चों की शिक्षा के लिए उपकरणों की कमी और अध्यापन तकनीक में सुधार न हो पाने का असर शिक्षा की गुणवत्ता पर पड़ता है। हालांकि भारत में 2000 से 2015 के बीच स्कूलों में छात्रों की भर्ती 86 फीसदी से बढ़कर 99 फीसदी पहुंच गई। यानी कि सार्वभौमिक शिक्षा के लक्ष्य के करीब पहुंच गए, पर वास्तविक स्थिति कुछ और बताती है। बच्चों के नाम स्कूलों में दर्ज करा लेने मात्र से उपलब्धि नहीं हो सकती।

एक बात यह सामने आई है कि बावजूद सरकारी स्कूलों में प्रति छात्र व्यय ज्यादा होने के निजी स्कूलों के बच्चे गणित और भाषा की पढ़ाई में सरकारी स्कूलों के बच्चों से बेहतर प्रदर्शन कर रहे हैं। हारवर्ड कैनेडी स्कूल एंड सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च के लैंटप्रिचेट और यामिनी अय्यर ने अनुमान लगाया है कि सरकारी स्कूलों में भी उसी स्तर को हासिल करने के लिए 2.32 खरब रुपये के खर्च की जरूरत होगी। यह धनराशि इस वक्त के शिक्षा पर होने वाले समस्त व्यय से ज्यादा होगी। यह अतिरिक्त राशि जीडीपी की 2.8 फीसदी होगी।

देश के अलग–अलग राज्यों में सरकारी खर्च एक जैसा नहीं है। जहां गोवा में प्रति छात्र सरकारी व्यय 45,000 रुपये है, वहीं बिहार में यह 4,300 रु प्रति छात्र है। पर केवल ज्यादा राशि खर्च होने से ही बेहतर परिणाम नहीं मिलते। 'असर' 2011–12 के आंकड़ों से यह भी पता लगता है कि गोवा के सरकारी स्कूलों में छात्रों के सीखने की प्रवृत्ति बिहार के छात्रों से केवल 6 फीसदी ही बेहतर है, जबकि गोवा में प्रति छात्र औसतन 40,000 रुपये की राशि ज्यादा खर्च होती है।

डिस्ट्रिक्ट इनफॉर्मेशन सिस्टम फॉर एजुकेशन (DISE) के आंकड़ों के अनुसार स्कूलों के इंफ्रास्ट्रक्चर की दशा काफी गम्भीर है। देश के हरेक 10 में से 6 में ही बिजली है यह देश का औसत है। बिहार के दस फीसदी स्कूलों में ही बिजली है। जबकि पंजाब, गुजरात और हरियाणा में लगभग सभी स्कूलों में बिजली है। 15 अगस्त, 2014 को लालकिले से प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने एक साल के भीतर देश के सभी स्कूलों में टॉयलेट बनाए जाने के मिशन का ऐलान किया था। पिछले साल सरकार ने दावा किया कि देश के सभी राज्यों में मौजूद विद्यालयों में टॉयलेट बनाने का काम पूरा हो चुका है।

इस मिशन के तहत 33 राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में 4,17,796 टॉयलेट का निर्माण कराया गया। इसे पूरा करने के लिए प्रधानमंत्री ने कॉरपोरेट सेक्टर और पब्लिक सेक्टर की कंपनियों से सहयोग करने की अपील की थी। विद्यालयों में टॉयलेट बनाने के मिशन के तहत सभी राज्यों में 2,72,694 टॉयलेट सरकारी पैसे से, 1,41,636 टॉयलेट पब्लिक सेक्टरों की कंपनियों की ओर से और 3,466 टॉयलेट कॉरपोरेट सेक्टर की मदद से बनाए गए।

इस खबर के बाद इस आशय की खबरें भी आ रही हैं कि रखरखाव के अभाव में काफी टॉयलेट टूट रहे हैं या उपयोग के लायक नहीं रहे हैं। यानी हमें इनके रखरखाव की योजना भी बनानी चाहिए। देश में प्रति कक्षा 42 छात्रों का औसत है। पर यह औसत बिहार और झारखंड में क्रमशः 78 और 67 का है। शिक्षा के अधिकार के कानून ने छात्र–शिक्षक अनुपात 30:1 रखने का सुझाव दिया था, जिसका राष्ट्रीय औसत तो ठीक है, पर माध्यमिक स्तर पर यह 41:1 है। माध्यमिक विद्यालयों की संख्या का अनुपात प्राइमरी स्कूलों की संख्या से भी काफी कम है।

'राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2016 के मसौदे के लिए कुछ इनपुट' शीर्षक से हाल में मंत्रालय ने प्रतिक्रियाएं मांगी थी। यह दस्तावेज पूर्व कैबिनेट सचिव टीएसआर सुब्रह्मण्यम की अध्यक्षता में गठित पांच सदस्यीय समिति की रिपोर्ट पर आधारित है। सरकार ने पूरी रिपोर्ट तो जारी नहीं की, बल्कि उसके आधार पर तैयार एक दस्तावेज को जारी किया है। अभी इस विषय पर राष्ट्रीय–स्तर पर जिस स्तर की चर्चा होनी चाहिए, वह दिखाई नहीं पड़ रही है। इस चर्चा में ग्रामीण क्षेत्र की शिक्षा के बुनियादी ढांचे पर अलग से बात होनी चाहिए, क्योंकि बदलाव की सबसे ज्यादा जरूरत जिस इलाके को है, वह ग्रामीण भारत ही है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं; दैनिक हिन्दुस्तान में स्थानीय संपादक रह चुके हैं।)

ई–मेल : pjoshi23@gmail.com

ग्रामीण विद्युतीकरण हेतु चुनौतियां

–डॉ. प्रदीप कुमार मुखर्जी

आज बिजली की आवश्यकता पूरे देश को है। इसके बिना तो विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती। देशवासियों को पर्याप्त मात्रा में गुणवत्तापूर्ण बिजली मुहैया कराना आज सबसे बड़ी चुनौती है। बिजली की आपूर्ति के अलावा कम वोल्टेज भी एक बड़ी समस्या है जो शहरी आबादी में भी देखने को मिलती है। ऐसे में गांवों तक अबाधित और भरोसेमंद रूप से बिजली पहुंचाना निश्चित रूप से एक चुनौती है।

हमारे देश की लगभग 70 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है। ऐसे गांवों की संख्या 6 लाख से कुछ अधिक है। वैसे भी भारत को 'गांवों का देश' ही कहा जाता है। अतः राष्ट्र के सर्वांगीण विकास के लिए गांवों का विकास भी आवश्यक है। व्यापक दृष्टि से, ग्रामीण विकास का अर्थ है ग्रामीण क्षेत्रों में प्रगति एवं उन्नति के लिए आवश्यक बुनियादी ढांचे के विकास के साथ–साथ ग्रामवासियों के जीवन–स्तर में सुधार और खुशहाली। इसके लिए गांवों को अन्य बुनियादी सुविधाएं मुहैया कराने के साथ–साथ एक मुख्य आवश्यकता बिजली प्रदान करने की भी है।

गांवों का विकास इस बात पर निर्भर करता है कि कितनी मात्रा में उन्हें अबाधिन एवं भरोसेमंद बिजली, सिंचाई, फसल की कटाई, प्रकाश, संचार व्यवस्था, स्वास्थ्य, शैक्षणिक और सामुदायिक गतिविधियों तथा कुटीर उद्योग आदि के लिए उपलब्ध होती है।

आज बिजली की आवश्यकता पूरे देश को है। इसके बिना तो विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती। देशवासियों को पर्याप्त मात्रा में गुणवत्तापूर्ण बिजली मुहैया कराना आज सबसे से बड़ी चुनौती है। बिजली की आपूर्ति के अलावा कम वोल्टेज भी एक बड़ी समस्या है जो शहरी आबादी में भी देखने को मिलती है। ऐसे में गांवों तक अबाधित और भरोसेमंद रूप से बिजली को पहुंचाना निश्चित रूप से एक चुनौती है। ग्रामीण विद्युतीकरण के प्रयासों एवं उसकी वर्तमान स्थिति पर चर्चा से पहले, आइए ग्रामीण विद्युतीकरण के फायदों के बारे में जरा विस्तार से चर्चा करें।

विद्युतचालित पंप सेटों से सिंचाई द्वारा कृषि उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है। पंप सेटों से गांवों की पेयजल की समस्या का भी समाधान हो सकता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद तालाब, परंपरागत कुंओं ओर नहरों आदि से ही सिंचाई की जाती थी। बाद में नलकूप लग जाने से सिंचाई करना आसान हो गया। कम ऊर्जा खर्च तथा कम समय में अधिक सिंचाई होने लगी। लेकिन, इनकी तुलना में विद्युत पंपसेट कृषि कार्य को अत्याधुनिक बना कर कृषि उत्पादकता में आशातीत वृद्धि कर सकते हैं।

विद्युत की उपलब्धता गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवाओं एवं बेहतर शिक्षा प्राप्ति में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

ग्रामीण डिस्पेंसरियों तथा प्राथमिक चिकित्सा केंद्रों में दवाओं और टीकों के भंडारण में बिजली महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। बिजली के कारण गांवों में बच्चे रात को भी पढ़ सकते हैं। इसके अलावा गांवों में प्रौढ़ शिक्षा केंद्रों को भी सांझ ढलने के बाद चलाया जा सकता है। इससे ग्रामीण शिक्षा के प्रचार–प्रसार में वृद्धि होगी।

गांवों में बिजली पहुंचने से संचार एवं मनोरंजन के साधनों, जैसेकि रेडियो और टेलीविजन का बखूबी प्रयोग किया जा सकता है। इसके अलावा टेलीफोन का भी इस्तेमाल किया जा सकता है। टेलीफोन के माध्यम से किसान केंद्रों आदि से जुड़कर ग्रामीण कृषक उन्नत बीज, खाद, पौधों के उन्नत संस्करण आदि के बारे में जानकारी हासिल कर कृषि उपज को बढ़ा सकते हैं। इससे उनकी व्यक्तिगत उन्नति के साथ–साथ उनकी आय में भी वृद्धि होगी। पंचायत घरों में रेडियो, टेलीविजन आदि की सुविधा उपलब्ध कराई जा सकती है। बिजली द्वारा इंटरनेट की सुविधा उपलब्ध करा ग्रामवासियों को शिक्षा, मनोरंजन एवं जानकारी प्रदान की जा सकती है।

बिजली से न केवल घरों बल्कि सार्वजनिक स्थलों, जैसे स्कूलों, सामुदायिक केंद्रों, पंचायत घरों तथा चौपालों आदि में रोशनी पहुंचाई जा सकती है। इसके अलावा गांवों की गलियों और सड़कों को रोशन किया जा सकता है। जिन गांवों में ऐसा किया जा चुका है वहां आपराधिक घटनाओं में कमी आने की सूचना मिली है।

ग्रामीण विद्युतीकरण की सबसे बड़ी उपयोगिता वहां सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) की सेवाओं को पहुंचाना है। इससे किसानों तक कृषि संबंधी सूचना पहुंचाने के अलावा सरकार और किसानों के बीच दोतरफा संचार कायम किया जा सकता है। खाद, बीज, सिंचाई, कीटनाशक आदि की जानकारी के अलावा पशुपालन और डेयरी संबंधी जानकारी भी आईसीटी के जरिए किसानों तक पहुंचाई जा सकती है। इसके अलावा आईसीटी का उपयोग ग्रामीण क्षेत्र में कार्य कर रहे शिक्षकों को प्रशिक्षण देने तथा टेलीमेडीसिन के जरिए स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने में भी किया जा सकता है। आईसीटी ग्रामीण लोगों को मार्केटिंग में भी मदद कर सकती है। युवाओं को आइसीटी का प्रशिक्षण देकर उनके रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं।

ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा में भी आईसीटी की महती भूमिका है। ऑनलाइन पाठ्यक्रमों, प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों आदि से महिलाएं घर पर रह कर भी काफी कुछ सीख सकती हैं। इसके अलावा जो महिलाएं हस्तशिल्प कार्य में दक्ष हैं उनके उत्पादों की ऑनलाइन मार्केटिंग द्वारा उन्हें आर्थिक लाभ पहुंच सकता है।

सरकार के अलावा आईसीटी की सुविधा गांवों तक पहुंचाने में निजी क्षेत्र भी सक्रिय हैं। इस दिशा में अनेक निजी कंपनियां कार्य कर रही हैं। इस प्रकार आईसीटी में अपार संभावनाएं छिपी हैं। यह न केवल गांवों में रोजगार एवं सम्पन्नता ला सकती है बल्कि दूसरी हरित–क्रांति लाने में सहयोग दे सकती हैं। ग्राम पंचायतों को ब्रॉडबैंड की सुविधा देकर गांवों में आईसीटी को पहुंचाया जा सकता है। ग्राम पंचायतों में खुले 'कॉमन सर्विस सेंटर' द्वारा ग्रामवासी इंटरनेट का इस्तेमाल कर सकते हैं। यह अलग बात है कि स्थानीय भाषाओं में एप्लीकेशंस एवं इंटरनेट सामग्री तैयार करने पर ही इस मुहिम में वांछित सफलता हासिल हो सकेगी। लेकिन आईसीटी की सुविधाओं को गांवों तक पहुंचाने के लिए ग्रामीण विद्युतीकरण पहली आवश्यकता है जबकि वास्तविकता यह है कि अभी भी अनेक गांवों तक बिजली नहीं पहुंची है।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में गांवों की संख्या 6,40,867 है जिनमें 83.3 करोड़ ग्रामवासियों का निवास है। 1 अप्रैल, 2015 तक 18,542 गांवों तक बिजली नहीं पहुंची थी। गौरतलब है कि गांवों तक बिजली पहुंचना और वहां के घरों तक बिजली पहुंचने में अंतर है यानी गांवों तक बिजली पहुंचने का अर्थ यह नहीं है कि वहां के सभी घरों तक बिजली पहुंच गई है। लेकिन इसकी चर्चा हम बाद में करेंगे।

15 अगस्त, 2015 को प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर दिए अपने भाषण में लालकिले की प्राचीर से यह कहा था कि 1000 दिनों के अंदर शेष अविद्युतीकृत 18,542 गांवों का विद्युतीकरण कर दिया जाएगा।

जेएम फाइनेंशियल्स की रिपोर्ट के अनुसार, सितंबर 2016 तक जिन दो राज्यों का (शहरी एवं ग्रामीण) पूर्ण विद्युतीकरण हो चुका है, वे राज्य हैं गुजरात एवं आंध्र प्रदेश। बाकी अनेक राज्यों को विद्युतीकरण के मामले में इस स्थिति तक पहुंचने में अभी काफी और समय लगने की संभावना है।

ग्रामीण विद्युतीकरण के आरंभिक प्रयास

ग्रामीण विद्युतीकरण को ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी माना जाता रहा है। अतः स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही सरकार द्वारा गांवों में बिजली पहुंचाने की दिशा में सोचा एवं काम किया जा रहा है। दरअसल, गांवों में बिजली पहुंचाने की योजना को सभी पंचवर्षीय योजनाओं में शामिल किया जाता रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना (सन् 1951–56) में कृषि एवं सिंचाई के विकास को रेखांकित किया गया था। उस समय की स्थिति यह थी कि औसतन 200 गांवों में से एक गांव को ग्रिड के साथ जोड़ा जाता था।

दूसरी पंचवर्षीय योजना (सन् 1956–61) में ग्रामीण विद्युतीकरण को विशेष रुचि के क्षेत्र के रूप में चिह्नित किया गया। तीसरी पंचवर्षीय योजना (सन् 1961–66) में पहली बार

'विद्युतीकरण' के क्षेत्र में दक्षता को प्राथमिकता दी गई।

मन में प्रश्न उठ सकता है कि शहरी एवं औद्योगिक दृष्टि से महत्वपूर्ण क्षेत्रों को ग्रामीण आबादी के मुकाबले शुरू से ही क्यों प्राथमिकता दी गई? पहली बात तो यह कि ग्रामीण इलाकों की ऊर्जा आवश्यकता शहरी एवं औद्योगिक क्षेत्रों की तुलना में काफी कम थी। दूसरे, स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्थिति यह थी कि गांव एक–दूसरे से कटे तथा दूर–दूर तक फैले थे। वहां पहुंचने के लिए यातायात की समुचित व्यवस्था एवं पक्की सड़कों का भी अभाव था। ऐसे में वहां विद्युतीकरण से जुड़े साजो–सामान, उपकरणों एवं मशीनों, जैसे कि ट्रांसफॉर्मरों, बिजली के खंभों आदि को पहुंचाना वास्तव में टेढ़ी खीर थी। ऊपर से इन दूरदराज के गांवों तक बिजली की लाइनों (ट्रांसमिशन लाइंस) को ले जाने की अपनी अलग समस्याएं थीं। पहाड़ी एवं वनों से आच्छादित ग्रामीण क्षेत्रों, जो एक–दूसरे से काफी अलग–थलग एवं दूर–दूर स्थित होते हैं, तक बिजली पहुंचाने की चुनौती और भी भारी थी। अतः ऐसे ग्रामीण अंचलों के विद्युतीकरण की प्रक्रिया में अधिक संचरण लागत (ट्रांसमिशन कॉस्ट) के साथ–साथ संचरण एवं वितरण ह्रास (ट्रांसमिशन एंड डिस्ट्रिब्यूशन लॉस) की समस्या भी जुड़ी थी।

दूरदराज के गांवों तक बिजली पहुंचाने की प्रक्रिया में कम वोल्टेज की समस्या तथा डिस्ट्रिब्यूशन सिस्टम की गुणवत्ता या विश्वसनीयता की समस्या भी शामिल थी।

गांवों में बिजली पहुंचाने को लेकर कुछ और समस्याएं भी हैं। जैसे, गरीबी रेखा से नीचे (बीपीएल) के लोगों तक मुफ्त या सब्सीडाइज्ड बिजली पहुंचाना। गांवों में बिजली पहुंचाए जाने का प्रावधान है लेकिन, ग्रामवासी इस पर निर्भर न कर अवैध तरीके से अपने घरों में बिजली का कनेक्शन लेते हैं। बिजली की खपत के लिए मीटर लगवाने में भी ग्रामवासियों की कोई विशेष रूचि नहीं होती है। ऐसे में सरकार को गांवों तक बिजली पहुंचाने में नुकसान तो उठाना ही पड़ता है, गांव वालों द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली बिजली के मामले में भी घाटा सहना पड़ता है।

देश में कुछ सुदूर स्थित दुर्गम ग्रामीण क्षेत्र भी हैं जहां परंपरागत ग्रिड द्वारा बिजली पहुंचा पाना संभव नहीं है। हमारे देश में ऐसे गांवों की संख्या लगभग 18,000 आंकी गई है। इन गांवों को ऊर्जा के अपारंपरिक स्रोतों, जैसे कि सौर प्रकाशवोल्टीय प्रणाली द्वारा ही बिजली पहुंचाई जा सकती है। उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि ग्रामीण विद्युतीकरण की अपनी अलग समस्याएं हैं। यही कारण है कि सरकार द्वारा पूरी–पूरी पहल के बावजूद अभी तक सभी गांवों का पूर्ण विद्युतीकरण नहीं हो पाया है।

ग्रामीण विद्युतीकरण संबंधी अन्य विवरण से पहले, आइए, वर्तमान संदर्भ में इसके महत्वपूर्ण बिंदुओं को रेखांकित किया जाए। ग्रामीण विद्युतीकरण संबंधी पांच महत्वपूर्ण बिंदु इस प्रकार हैं:

- ग्रामीण विद्युतीकरण के लिए बुनियादी ढांचे की स्थापना।
- गांवों में स्थित घरों को कनेक्टिविटी प्रदान करना।
- गुणवत्तापूर्ण बिजली को पर्याप्त मात्रा में गांवों तक पहुंचाना।
- गांवों तक बिजली को वहन करने योग्य उचित दर पर पहुंचाना।
- मूलतः स्वच्छ एवं पर्यावरण–सम्भत धारणीय ऊर्जा को दक्षतापूर्वक गांवों तक पहुंचाना।

भारत की अर्थव्यवस्था में ग्रामीण अर्थव्यवस्था महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। यही कारण है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही सरकार ने ग्रामीण बुनियादी ढांचे, खासकर ऊर्जा के बुनियादी ढांचे में विकास एवं सुधार लाने के पुरजोर प्रयास किए हैं। बावजूद इसके, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सही हालत तक पहुंचाने में अभी बहुत कुछ किए जाने की आवश्यकता है।

सन् 2011 की जनसंख्या गणना के आधार पर, 45 प्रतिशत ग्रामीण घरों तक अभी भी बिजली नहीं पहुंची है। लेकिन, जिन गांवों या वहां के घरों तक बिजली पहुंची भी हैं उनमें से सभी गांवों को गुणवत्तापूर्ण बिजली मुहैया नहीं हो पाई है यानी कम वोल्टेज और जरूरत से कम बिजली मिलने की शिकायत वहां बदस्तूर जारी है। एक अधिकृत आकलन के अनुसार, देश की 33 प्रतिशत जनसंख्या को उसकी आवश्यकता से कम बिजली प्राप्त हो रही है। ऐसे में गांवों में मिलने वाली बिजली के बारे में कल्पना ही की जा सकती है। आलम यह है कि ग्रामीण इलाकों में औसतन प्रति माह प्रति घर बिजली की खपत 50 किलोवॉट/घंटे यानी 50 यूनिट मात्र ही रहती है।

पहली तीन पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा ग्रामीण विद्युतीकरण की दिशा में किए जाने वाले प्रयासों की हम चर्चा कर चुके हैं। लेकिन, इस दिशा में ज्यादा कुछ कर पाना सरकार के लिए संभव नहीं हो पाया। बहरहाल, चौथी, पांचवीं एवं बाद में पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण विद्युतीकरण की दिशा में सरकार द्वारा काफी कुछ करने की कोशिश की गई तथा इस बाबत कार्ययोजनाएं भी बनीं। यही नहीं बल्कि ग्रामीण विद्युतीकरण से जुड़े कई कार्यक्रमों एवं परियोजनाओं को भी शुरू किया गया।

इस दिशा में सरकार द्वारा प्रमुख पहल ग्रामीण विद्युत निगम (रूरल इलैक्ट्रिक कारपोरेशन–आरईपी) के गठन द्वारा सन् 1969 में की गई इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण विद्युतीकरण से जुड़ी किसी भी परियोजना कार्यक्रम को वित्तपोषित करना तथा उसे बढ़ावा देना था। राज्य विद्युत बोर्डों, राज्य विद्युत उपयोगी सेवाओं, उपकरण विनिर्माताओं आदि को ऋण प्रदान करने के अलावा, ग्रामीण विद्युत निगम का कार्य विद्युत मंत्रालय द्वारा

चलाए जाने वाले ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रमों का भी प्रबंधन करना था।

चौथी (सन् 1969–70) एवं पांचवीं (सन् 1974–75) पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान ग्रामीण विद्युतीकरण के लिए लक्ष्य–आधारित नीतियों को प्राथमिकता दी गई। इन नीतियों में सिंचाई के लिए इस्तेमाल होने वाले पंप सेटों के विद्युतीकरण तथा ऐसे सभी गांव, जिनकी न्यूनतम जनसंख्या, 5,000 थी, को ग्रिड द्वारा जोड़ा जाना शामिल था।

ग्रामीण विद्युतीकरण की दिशा में भारत सरकार द्वारा उठाए गए कदमों में शामिल हैं–

1. सन् 1974 में शुरू किया गया न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम।
2. सन् 1988 में शुरु की गई कुटीर ज्योति योजना जिसका उद्देश्य भारत के ग्रामीण इलाकों में गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले लोगों को बिजली का एकल पाइंट उपलब्ध कराना था ताकि कम से कम एक बल्ब का प्रकाश तो उनके घरों में हो सके।
3. सन् 2001 में अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय (जिसका नया नाम नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय है) द्वारा शुरू किया गया दूरस्थ ग्राम विद्युतीकरण कार्यक्रम (रिमोट विलेज इलेक्ट्रिफिकेशन प्रोग्राम)। इस कार्यक्रम का लक्ष्य दूरदराज के क्षेत्रों में स्थित ग्रिड से न जुड़े गांवों को नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों द्वारा बिजली पहुंचाना था। गौरतलब है कि अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय (एमएनईएस) की स्थापना सन् 1992 में हुई थी। सन् 1982 में स्थापित अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत विभाग ने ही सन् 1992 में एमएनईएस नाम से मंत्रालय का रूप लिया। अक्तूबर 2006 में एमएनईएस का नाम बदल कर एमएनआरई यानी नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय हो गया।
4. सन् 2003 में शुरु की गई प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना जिसका लक्ष्य विद्युतीकरण की पूर्व (सीमित) परिभाषा के अनुसार जिन गांवों तक बिजली नहीं पहुंची थी, उन तक बिजली पहुंचाना था।
5. सन् 2005 में शुरू की गई राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना जिसका लक्ष्य सन् 2009 तक सभी गांवों तक बिजली पहुंचाना था, तथा सन् 2012 तक गांवों के हर घर तक रोजाना कम से कम एक यूनिट बिजली पहुंचाना था। राजीव गांधी योजना से पूर्व के सभी कार्यक्रमों या योजनाओं को इसके साथ समाहित कर दिया गया। सन् 2009 में विद्युत मंत्रालय ने राजीव गांधी योजना के अंतर्गत जिन गांवों तक बिजली नहीं पहुंची थी, मिनीग्रिडों के माध्यम से उनके विद्युतीकरण के लिए वितरित विकेंद्रित उत्पादन आरंभ किया। इसके अंतर्गत ऐसे गांवों को भी शामिल किया गया जिन्हें 6 घंटे से कम अवधि के लिए बिजली उपलब्ध हो पाती थी।
6. नवंबर 2015 में वर्तमान सरकार ने दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना की घोषणा की। राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना को भी इसमें समाहित कर दिया गया। दीनदयाल योजना ने राजीव गांधी योजना में अनेक गुणात्मक परिवर्तन किए। विद्युतीकरण के अलावा, इस योजना ने घरेलू और कृषि कार्यों के लिए प्रयुक्त होने वाले विद्युत मीटरों के पृथवकरण के लिए निधि का अनुमोदन किया। इसके अलावा ग्रामीण विद्युत वितरण ढांचे (सरल इलैक्ट्रिसिटी स्ट्रक्चर) को भी मजबूती प्रदान करने में इसने अपनी महती भूमिका निभाई। विद्युत फीडरों, डिस्ट्रिब्यूशन ट्रांसफॉर्मरों तथा उपभोक्ताओं के लिए अलग मीटरों की भी व्यवस्था की गई।

राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना, जो संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन यानी यूपीए सरकार के दौरान सन् 2005 में आरंभ की गई थी, से पहले ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम कछुए की चाल से चल रहा था। सन् 1997–2002 के दौरान केवल 18,500 गांवों को ही बिजली पहुंचाई गई थी जबकि सन् 1980–85 के दौरान 1,20,000 गांवों को बिजली पहुंचाई गई थी। ग्रामीण विद्युत निगम (आरईसी) द्वारा प्रदत्त आंकड़ों के अनुसार, वर्ष 2002–03 वर्ष 2003–04 तथा वर्ष 2004–05 के दौरान क्रमशः 0,122 तथा 765 गांवों तक बिजली पहुंचाई गई थी। स्पष्ट है कि राजीव गांधी योजना से पूर्व के ग्रामीण विद्युतीकरण के सभी कार्यक्रम अपने अनुमोदित लक्ष्यों से बहुत पीछे थे।

कोई दो राय नहीं कि राजीव गांधी योजना ने ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम को काफी गति प्रदान की। इस योजना के पहले ही वर्ष (सन् 2005–06) में 10,000 गांवों के विद्युतीकरण कार्य को अंजाम दिया गया। इसके बाद वर्ष 2006–07 के दौरान 28,706 गांवों, वर्ष 2007–08 के दौरान 9301 गांवों तथा वर्ष 2008–09 के दौरान 12,056 गांवों को बिजली पहुंचाने का काम पूरा किया गया।

सन् 2001 की जनसंख्या गणना के अनुसार 43.52 प्रतिशत ग्रामीण घरों को बिजली पहुंचाई गई थी। सन् 2011 की जनसंख्या गणना के अनुसार, यह आंकड़ा थोड़ा ही बढ़कर 55.1 प्रतिशत हुआ था। जब मई 2014 में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन यानी एनडीए की सरकार सत्ता में आई तो यूपीए सरकार सवा लाख गांवों, जिन्हें सन् 2005 तक बिजली नहीं मिली थी, में से 1 लाख 5 हजार गांवों तक बिजली पहुंचाने का कार्य कर चुकी थी।

ग्रामीण विद्युतीकरण को अवलंब प्रदान करने वाली नीतियों एवं नियामक अतिक्रमों (इनिशिएटिव) में द इलेक्ट्रिसिटी एक्ट

भारत में सौर ऊर्जा की अपार संभावनाएं

भारतीय भू–भाग पर औसतन 300 दिन सूर्य रहता है। यदि इस भू–भाग पर पड़ रही सौर ऊर्जा का एक प्रतिशत भी परिवर्तित किया जाए तो देश में बिजली की कमी की समस्या से आसानी से निपटा जा सकता है। सौर ऊर्जा को लेकर अब तक ये समस्या रही कि इसकी लागत काफी ज्यादा थी। लेकिन अब स्थिति बदल चुकी है और उत्पादन लागत में कमी देखने को मिल रही है। सौर ऊर्जा का सबसे बड़ा फायदा ये है कि ये एक स्वच्छ ऊर्जा है। सौर ऊर्जा को जनमानस हेतु उपयोगी बनाने के लिए कई प्रयास किए जा चुके हैं और कई उपकरणों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग हो रहे हैं।

1. **सोलर कुकर–** सौर ऊर्जा से भोजन पकाने का यह उपकरण मुख्यतया 2 प्रकार का होता है। 1) डिशनुमा सौर कुकर 2) संदुकनुमा सौर कुकर। संदुकनुमा सौर कुकर व्यापक प्रचलित है जिसमें 100 से 110 डिग्री सेंटीग्रेड तक तापमान उत्पन्न होता है; फलस्वरूप भोजन पकाया जा सकता हैं। प्रायः यह उपकरण 5 से 50 सदस्यों हेतु भोजन पकाने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता को बड़ी आसानी से हल कर देता है।
2. **सोलर लालटेन–** ग्रामीण क्षेत्रों और दूरस्थ क्षेत्रों में विद्युत की आवश्यकता की पूर्ति हेतु अत्यंत उपयोगी उपकरण सौर लालटेन में सोलर मोड्यूल द्वारा बेट्री चार्ज की जाती है जिससे रात्रि में लगातार 3 से 4 घंटे तक प्रकाश प्राप्त किया जा सकता है।
3. **सोलर स्ट्रीट लाईट–** ऊर्जा संरक्षण के उपाय हेतु आवास स्थलों व मार्गों पर प्रकाश के लिए सोलर स्ट्रीट लाईट को उपयोग में लाया जा सकता है। सोलर पैनल द्वारा दिन के समय बैट्री को चार्ज किया जाता है।
4. **सोलर गीजर–** सौर गीजर सौर तापीय ऊर्जा से पानी गर्म करने हेतु उपयुक्त उपकरण है जो घरेलू उपयोग के साथ होटल, रेस्टोरेंट, अस्पताल, हॉस्टल, डेयरी आदि में उपयोगी है।
5. **सौर वाहन–** सौर ऊर्जा से बेट्री द्वारा चलने वाले वाहन अत्यन्त प्रचलित है जो पर्यावरणीय दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं। ये सुगम और कम दूरी के कार्य हेतु उपयोगी हैं जैसे सोलर रिक्शा, सोलर कार आदि।

सौर पम्प– सोलर पैनल द्वारा सौर ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित कर दिया जाता है जिससे सौर पम्प की मोटर चलाई जाती है। सौर ऊर्जा की सहायता से कृषि क्षेत्रों में सिचांई और भी सुगम तथा कम लागत पर उपलब्ध हो गई है।

2003, नेशनल इलेक्ट्रिसिटी पॉलिसी 2005, नेशनल टेरिफ पॉलिसी 2006 तथा सरल इलेक्ट्रिफिकेशन पॉलिसी 2006 का उल्लेख किया जा सकता है। गौरतलब है कि ग्रामीण विद्युतीकरण हमारे संविधान में समधिकारी विषय हैं, अतः इसकी मूल जिम्मेदारी राज्यों पर ही है।

ग्रामीण विद्युतीकरण नीति 2006 ने विद्युतीकरण की पुरानी परिभाषा को बदल कर इसे पहले की अपेक्षा अधिक विस्तार प्रदान किया। इसके अनुसार किसी भी गांव को तभी विद्युतीकृत माना जाएगा जब ग्राम पंचायत द्वारा यह प्रमाणित कर दिया जाएगा कि–

क) मूल बुनियादी ढांचे, जैसे कि डिस्ट्रिब्यूशन ट्रांसफॉर्मरों एवं डिस्ट्रिब्यूशन लाइनों को कम से कम एक दलित बस्ती/पल्ली समेत रिहायशी ग्रामीण इलाके में उपलब्ध कराया गया हो,

ख) सार्वजनिक स्थानों, जैसेकि स्कूलों, पंचायत कार्यालय, स्वास्थ्य केंद्रों, डिस्पेंसरियों, सामुदायिक केंद्रों आदि को बिजली उपलब्ध कराई गई हो, तथा

ग) गांव के सभी घरों में से कम से कम 10 प्रतिशत घरों तक बिजली पहुंचाई गई हो।

वर्तमान स्थिति

सरकारी आंकड़ों के अनुसार, सितंबर 2016 तक देश के 98.7 प्रतिशत गांवों तक बिजली पहुंचाई जा चुकी है। लेकिन, उपर्युक्त परिभाषा के अनुसार गांव तक बिजली पहुंचने का अर्थ यह नहीं कि उस गांव के सभी घरों तक बिजली पहुंच चुकी है। उदाहारण स्वरूप बिहार, उत्तर प्रदेश एवं असम के गांवों की बात करें तो बिहार के 97.9 प्रतिशत गांवों का विद्युतीकरण हो चुका है, लेकिन वास्तविकता यह है कि बिहार के 82.4 प्रतिशत ग्रामीण घरों तक ही अभी बिजली पहुंची है। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के 99.5 प्रतिशत गांवों तक बिजली पहुंचने की बात सरकारी आंकड़ों में बताई जाती है। लेकिन अभी भी उत्तर प्रदेश के 72.97 प्रतिशत घरों तक ही बिजली पहुंची है। जहां तक असम की बात है तो वहां के 95.3 प्रतिशत गांवों का विद्युतीकरण हो चुका है। लेकिन वास्तविकता यह है कि असम के केवल 62.93 ग्रामीण घरों तक ही अभी बिजली पहुंच पाई है।

नवीकरणीय ऊर्जा की भूमिका

जिन अगम्य या दुर्गम ग्रामों तक परंपरागत ग्रिड द्वारा बिजली नहीं पहुंचाई जा सकती उन तक सौर प्रकाशवोल्टीय पैनलों द्वारा बिजली पहुंचाने का काम किया जा रहा है। सौर प्रकाशवोल्टीय प्रणाली द्वारा उत्पन्न विद्युत का पेयजल तथा सिंचाई कार्य में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। विद्युतचालित पंप सेटों की जगह सौर पंपों का इस्तेमाल किया जा सकता है।

गौरतलब है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सिंचाई और सामुदायिक जल आपूर्ति प्रणालियों के लिए पंप महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भारत में 2 करोड़ 10 लाख सिंचाई पंप हैं, जिनमें से 90 लाख डीजल पर चलते हैं और 1 करोड़ 20 लाख ग्रिड से मिलने वाली बिजली पर चलते हैं। उल्लेखनीय है कि सिंचाई पंपों द्वारा बिजली की खपत भारत की कुल बिजली खपत का 10–15 प्रतिशत हिस्सा है। गांवों में किसान नमक बनाने के लिए भी पंप सेटों, जो डीजल पर चलते हैं, का इस्तेमाल करते हैं।

गांवों में डीजल एवं विद्युतचालित पंपों की जगह सौर पंपों का इस्तेमाल किया जा सकता है। सौर पंपों का उपयोग खेतों की सिंचाई के अलावा मत्स्य पालन, वानिकी, पेयजल की आपूर्ति तथा नमक बनाने में भी किया जा रहा है।

बायोगैस, जिसका इस्तेमाल एक स्वच्छ, पर्यावरण सम्मत एवं किफायती ईंधन के रूप में गांवों में किया जा रहा है, में भी अब बिजली बनाने के प्रयास चल रहे हैं। कुछ राज्यों, जैसे कि पंजाब में बायोगैस से जेनरेटर चलाकर बिजली उत्पन्न की जा रही है। ये बायोगैस जेनसेट औसतन 10–11 घंटे रोजाना चलाए जाते हैं और इनसे प्रतिदिन 2200–2500 यूनिट बिजली का उत्पादन होता है। इस प्रकार उत्पन्न बिजली का उपयोग अलग–अलग मशीनों, उपकरणों, पंखों आदि को चलाने के अलावा रोशनी करने तथा अन्य औद्योगिक अनुप्रयोगों में किया जाता है। इस प्रकार रोजाना 600–700 लीटर डीजल की बचत की जा सकती है।

नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा एवं बायोगैस की अपनी उपयोगिता है। उन गांवों जहां परंपरागत ग्रिड द्वारा बिजली नहीं पहुंचाई जा सकती, वहां सौर ऊर्जा से उत्पन्न विद्युत ऊर्जा का उपयोग प्रकाश करने, खेतों की सिंचाई तथा अन्य कार्यों के लिए किया जा सकता है। सौर ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलने का काम सौर सेल करते हैं। प्रकाशवोल्टीय पैनल कई सौर सेलों से मिलकर बनते हैं। इन सेलों के निर्माण में ऐसे पदार्थों का इस्तेमाल किया जाता है जिनमें विशिष्ट गुण मौजूद होते हैं। इन्हें प्रकाशवोल्टीय पदार्थों की संज्ञा दी जाती है। सौर ऊर्जा के अलावा बायो जेनसेटों से उत्पन्न बिजली का उपयोग भी गांवों के अलग–अलग कार्यों के लिए किया जा सकता है।

(लेखक वरिष्ठ विज्ञान लेखक हैं और दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर रहे हैं।)

ई–मेल : pkm_du@rediffmail.com

नई तकनीक

अब हटेगी किसानों के चेहरे से चिंता की लकीर

–किरण कुमार, भीष्म कुमार सिन्हा

कहते हैं कि उम्मीद पर दुनिया कायम है। सूखे और अकाल जैसी स्थिति से निपटने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान आई.ए.आर.आई ने ऐसे हाइड्रोजैल का विकास किया है जो पानी की कमी वाले इलाकों में खेती के लिए फायदेमंद साबित हो सकता है। पूसा हाइड्रोजैल के बारे में नेशनल रिसर्च डेवलपमेंट कॉर्प के अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक केवीएसपी राव कहते हैं कि इस टेक्नोलॉजी का विकास खासकर उन इलाकों को ध्यान में रखकर किया गया है जहां पानी की कमी होती है। देश के कई इलाकों में ट्रायल से यह साबित हुआ है कि हाइड्रोजैल कम वर्षा और सिंचाई के बिना भी फसल उत्पादन में बढ़ोतरी कर सकता है। इसे अनाज से लेकर दलहन, सब्जी और यहां तक कि नर्सरी पर भी परखा जा चुका है।

आईएआरआई के वैज्ञानिक अब पूसा हाइड्रोजैल की उत्पादकता बढ़ाने पर काम कर रहे हैं और इसके लिए इस जैल में सूक्ष्म पोषक तत्वों को मिलाया जा रहा है जो बारिश की कमी वाले इलाकों की मृदाओं में नहीं पाए जाते हैं। इस तरह किसानों के लिए इस जेल की उपयोगिता और बढ़ जाएगी। आई.ए.आर.आई के निदेशक एच एस गुप्ता ने कहा कि पूसा हाइड्रोजैल का विकास भारत के विश्वस्तरीय कृषि शोध और आमतौर पर आने वाली समस्याओं का समाधान ढूंढने की क्षमता का एक और प्रमाण है। दूसरे देश भी अब इस तरह का उत्पाद बनाने की कोशिश में लग गए हैं। हालांकि आई.ए.आर.आई ने पूसा हाइड्रोजैल का भारत में पेटेंट करा लिया है और अंतरराष्ट्रीय पेटेंट हासिल करने के लिए भी प्रक्रिया की शुरुआत की जा चुकी है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार सिर्फ एक लाख हेक्टेयर भूमि पर यहां खेती हो रही है। इसमें 3826 हेक्टेयर में गेहूं, 7000 हेक्टेयर में मक्का, 9775 हेक्टेयर में दलहन, 830 हेक्टेयर में तिलहन तथा 2804 हेक्टेयर में आलू की खेती हो रही है। किसान विकास केंद्र का दावा है कि यदि इस विधि का प्रयोग किया जाए तो कृषि योग्य भूमि का दायरा बढ़ेगा।

कैसे काम करता है पूसा हाइड्रोजैल

पूसा हाइड्रोजैल बारीक कंकड़ों जैसा है। इसे फसल की बोवनी की समय ही बीज के साथ खेतों में डाला जाता है। जब फसल में पहली बार पानी दिया जाता है तो पूसा हाइड्रोजैल

पूसा हाइड्रोजैल के इस्तेमाल के बाद

पूसा हाइड्रोजैल इस्तेमाल नहीं किया गया

पानी को सोखकर 10 मिनट में ही फूल जाता है और जैल में बदल जाता है। जैल में बदला यह पदार्थ गर्मी या उमस से सूखता नहीं है। चूंकि यह जड़ों से चिपका रहता है, इसलिए पौधा अपनी जरूरत के हिसाब से जड़ों के माध्यम से इस जैल का पानी सोखता रहता है। यह जैल ढाई से तीन महीने तक एक–सा रह सकता है।

खेत पर बुरा असर नहीं, अनाज का दाना भी बड़ा

बड़ौदा कृषि विज्ञान केन्द्र के वैज्ञानिक चंद्रभान सिंह के अनुसार जिस खेत में चने व गेहूं के साथ यह पदार्थ डाला गया, वहां सिर्फ एक पानी में ही फसल तैयार हो गई। इतना ही नहीं पूसा हाइड्रोजैल के सहारे हुए चने का आकार भी दो बार की सिंचाई से हुए चने से बड़ा है। खास बात यह है कि इस पदार्थ से खेत में कोई बुरा असर नहीं हुआ।

पूसा हाइड्रोजैल के क्या है लाभ

- जल संकट से मिलेगी निजात व खर्च में भी आएगी कमी।
- जमीन तैयार करते समय ही होगा खेतों में छिड़काव।
- 55 डिग्री सेल्सियस तापमान पर भी नहीं कम होगी खेतों की नमी।
- फर्टिलाइजर व कीटाणु की दवा के साथ उपयोग से भी नहीं होगा कोई असर।
- फूल व सब्जी की खेती में भी होगा प्रयोग।
- यह मिट्टी की गुणवत्ता को भी बेहतर करता है।
- इस पर वातावरण के लवणों का भी असर कम होता है और इस तरह बीजों का अंकुरण सुधरता है, जड़ों की बढ़वार बेहतर होती है और उर्वरकों की जरूरत घटती है।
- यह पर्यावरण के लिए सुरक्षित है।
- तरल सोखने की क्षमता के कारण इसका इस्तेमाल डायपर और नैपकिन बनाने के लिए भी किया जा सकता है।

यह ना केवल पानी सोखने की क्षमता को बेहतर करता है बल्कि हाइड्रोजैल से फसलों की पोषक तत्वों को सोखने की क्षमता भी बेहतर हो जाती है। 50 डिग्री तापमान में भी यह अपने वजन का 350 गुना पानी सोख सकता है। इसके अलावा यह मौजूदा स्वरूप में पॉउडर है जिसे मिट्टी में बीज और खाद के साथ मिलाया जा सकता है।

एक एकड़ में 12 सौ का खर्च

अभी पूसा हाइड्रोजैल के दाम 1200 रुपये/किलो हैं। एक एकड़ में बीज के साथ एक किलो पूसा हाइड्रोजैल बोया जाता है जबकि बोरों से एक बार की सिंचाई में किसान को एक एकड़ के लिए 500 से 700 रुपये चुकाने पड़ते हैं। कृषि वैज्ञानिकों का कहना है कि जहां पानी ही नहीं वहां के लिए यह चीज वरदान है। पूसा हाइड्रोजैल ऐसी जगहों के लिए है जहां फसलों के लिए पानी पर्याप्त नहीं है। इससे हर वह फसल ली जा सकती है जिसमें दो या तीन बार पानी देना पड़ता है। वैज्ञानिकों को पूरा भरोसा है कि थोक उत्पादन और तकनीकी विकास से आने वाले समय में इसकी लागत घट जाएगी। इसके साथ ही आई.ए.आर.आई ने इस जैल को सब्सिडी मुहैया कराने के लिए सरकार से संपर्क साधा है जैसाकि कुछ खाद और जल–संरक्षण वाले उपकरणों के मामले में होता है। इस तरह इस जैल को गरीब किसानों के लिए भी सुलभ बनाने की कोशिश की गई है। अगर इस आवेदन को मंजूर कर लिया जाता है तो पूसा हाइड्रोजैल की खपत बड़े पैमाने पर नजर आने लगेगी।

वैज्ञानिको की इस अनोखी खोज से किसानों को पानी की किल्लत से छुटकारा मिल पाएगा और सूखे की चपेट में आने वाले किसानों के चेहरे हमेशा मुस्कुराते रहेंगे। किसान भाई पूसा हाईड्रोजैल अपनाकर पानी की कमी वाले इलाकों से भी अच्छी पैदावार ले सकेंगे।

(इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़)
ई–मेल : kiran.nagraj90@gmail.com

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

स्वच्छता पखवाड़ा लेखा-जोखा

कृषि और कृषक कल्याण मंत्रालय में लगेंगे कचरा प्रबंधन संयंत्र

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के निर्देशों के अनुरूप कृषि और कृषक कल्याण मंत्रालय के सभी तीन विभागों ने इस साल 16 से 31 अक्तूबर तक स्वच्छता पखवाड़ा मनाया। कृषि, सहकारिता और कृषक कल्याण विभाग, पशुपालन, डेयरी और मत्स्य क्षेत्र विभाग (डीएडीएफ) तथा कृषि अनुसंधान और शिक्षण विभाग ने कार्यालय परिसरों से बाहर निकल कर कृषि मंडियों, मछली बाजारों तथा कृषि विज्ञान केन्द्रों के नजदीक के गांवों में स्वच्छता अभियान चलाया। पखवाड़े के दौरान ऐसे कदमों पर ध्यान केन्द्रित किया गया जो इसके खत्म होने के बाद भी जारी रखे जाएंगे। केंद्रीय कृषि और कृषक कल्याण मंत्री राधा मोहन सिंह ने हाल ही में मीडिया को स्वच्छता पखवाड़ा के दौरान अपने मंत्रालय की पहलकदमियों और उनके नतीजों के बारे में जानकारी दी।

पखवाड़े के दौरान 271 कृषि मंडियों में स्वच्छता अभियान चलाया गया। एक स्वच्छता एक्शन प्लान तैयार कर उसमें इलेक्ट्रॉनिक राष्ट्रीय कृषि बाजार योजना के तहत हर मंडी में कचरा प्रबंधन संयंत्र स्थापित करने के लिए 10 लाख रुपये का प्रावधान करने का फैसला लिया गया। यह फैसला भी लिया गया कि राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के कोष का एक प्रतिशत हिस्सा ठोस कचरा प्रबंधन पर खर्च किया जाएगा। इसके अलावा तीनों विभागों के विभिन्न कार्यालयों में सफाई की गई, शौचालयों में सेंसर लगाए गए तथा गैर–जरूरी कागजातों, कबाड़ और अवैध कब्जों को हटाया गया। श्री राधा मोहन सिंह 26 अक्तूबर को नई दिल्ली के कृषि भवन में कृषि, सहकारिता और कृषक कल्याण विभाग के मुख्यालय में तथा 28 अक्तूबर को चंडीगढ़ की कृषि मंडी में सफाई और वृक्षारोपण अभियान में शामिल हुए। इस विभाग के अधीन भारतीय मृदा और भूमि उपयोग सर्वेक्षण के देशभर के केन्द्रों की स्वच्छता गतिविधियों में स्थानीय सांसदों और अन्य जन–प्रतिनिधि शामिल हुए। विभाग के कोलकाता कार्यालय में एक कंपोस्ट पिट का उद्घाटन किया गया। राज्यों के सहयोग से मंडियों में कंपोस्ट मशीनें भी लगायी जा रही हैं।

स्वच्छता पखवाड़ा के दौरान राष्ट्रीय मत्स्य क्षेत्र विकास बोर्ड (एनएफडीबी), भारतीय मत्स्य क्षेत्र सर्वेक्षण केन्द्रीय मत्स्य क्षेत्र, समुद्री और इंजीनियरी प्रशिक्षण संस्थान राष्ट्रीय मत्स्य क्षेत्र, उत्पादन पश्चात प्रौद्योगिकी और प्रशिक्षण संस्थान तथा केंद्रीय मत्स्य क्षेत्र तटीय इंजीनियरी संस्थान ने भी स्वच्छता पखवाड़ा के दौरान कई कार्यक्रम चलाए। पंद्रह राज्यों में 50 थोक और खुदरा मछली बाजारों की सफाई कर उनमें स्वच्छता बनाए रखने के लिए जागरूकता फैलाने की मुहिम चलाई गई। मत्स्य विभाग के अधीन सभी संस्थानों की इमारतों और उनके परिसरों में सफाई की गई। स्वास्थ्यकर मत्स्य प्रबंधन तथा मछली के बाजारों और इसके प्रसंस्करण की प्रक्रिया में साफ–सफाई के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए शिविरों और पदयात्राओं का आयोजन किया गया और पर्चे बांटे गए। एनएफडीबी के गुवाहाटी स्थित पूर्वोत्तर क्षेत्र केन्द्र में समेकित मत्स्य पालन के जरिए कचरे के पुनर्चक्रण तथा कोलकाता के नलबन में अवशिष्ट जल मत्स्य पालन पर राज्य–स्तरीय कार्यशाला, आयोजित की गई।

कृषि अनुसंधान और शिक्षण विभाग तथा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) में भी 16 के 31 अक्तूबर तक स्वच्छता पखवाड़ा मनाया गया। आईसीएआर के नई दिल्ली स्थित मुख्यालय, सभी 102 अनुसंधान संस्थानों

और 648 कृषि विज्ञान केंद्रों ने पखवाड़े के कार्यक्रमों में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया। उन्होंने अपने परिसरों और रिहायशी क्षेत्रों के अलावा उनके आसपास के गांवों और अन्य इलाकों में सफाई की तथा विचार गोष्ठियों, जागरूकता शिविरों, रैलियों, नुक्कड़ नाटकों और विशेषज्ञों के व्याख्यानों का आयोजन किया।

कृषि विज्ञान केन्द्रों और संस्थानों के जरिए 3040 गांवों में किसानों और ग्रामीण युवाओं की सक्रिय भागीदारी से स्वच्छता को बढ़ावा देने से संबंधित कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। खेती की स्वच्छ प्रौद्योगिकी और प्रक्रियाओं तथा कृषि अवशेषों के सर्वश्रेष्ठ इस्तेमाल को बढ़ावा देने के प्रयास किए गए। पखवाड़े के दौरान देश के विभिन्न हिस्सों में आयोजित कार्यक्रमों में केन्द्रीय और स्थानीय नेताओं तथा संस्थानों और आईसीएआर मुख्यालय के वरिष्ठ अधिकारियों ने भी हिस्सा लिया। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (आईएआरआई), नई दिल्ली ने अपने आवासीय परिसर के हर ब्लॉक के लिए स्वच्छता निरीक्षकों की एक टीम गठित की है जो घरों से निकलने वाले सूखे और गीले कचरे को निवासियों की भागीदारी से अलग–अलग कर उनके समुचित पुनर्चक्रण की व्यवस्था करेगी।

कृषि विज्ञान केन्द्र, शिकोहपुर (गुड़गांव) में 27 अक्तूबर 2016 को 'कृषि अवशेष से धन सृजन' विषय पर विशेष संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें कृषि अवशेष के सर्वश्रेष्ठ उपयोग से संबंधित प्रौद्योगिकियों का प्रदर्शन भी किया गया। इनमें बायो–कंपोस्ट तैयार करने, कीट कंपोस्टिंग, भूसे के उपयोग, पुआल संवर्द्धन, अवशिष्ट जल पुनर्चक्रण तथा कपास और मत्स्य क्षेत्र कचरा प्रबंधन से संबंधित प्रौद्योगिकियां शामिल हैं। संगोष्ठी में 350 से अधिक किसानों और वैज्ञानिकों ने हिस्सा लिया।

राज्यों और संघशासित क्षेत्रों के प्रतिनिधियों के साथ 27 अक्टूबर को वीडियो कांफ्रेंस कर उन्हें स्वच्छता पखवाड़ा से संबंधित गतिविधियों के बारे में जानकारी दी गई। उनसे अनुरोध किया गया है कि वे कृषि अवशेष से कंपोस्ट बनाने के लिए अपनी मौजूदा योजनाओं में पर्याप्त प्रावधान करें– डीडी किसान से राष्ट्रीय जैविक खेती केन्द्र की ठोस कचरा निस्तारण प्रौद्योगिकी और आईसीएआर की तरल कचरा निस्तारण प्रौद्योगिकी पर दो फिल्में बनाने के लिए कहा गया है जिन्हें इस टेलीविजन चैनल के मौजूदा कार्यक्रमों में दिखाया जाएगा।

स्वच्छ भारत अभियान में नदियों की प्रमुख भूमिका है– गंगा भारत में चिरकाल से स्वच्छता और पवित्रता का प्रतीक रही है। इसे फिर से साफ बनाने के लिए जरूरी है कि इसके किनारे के क्षेत्रों में जैविक कृषि को बढ़ावा दिया जाए ताकि खेती में हानिकारक कीटनाशकों, उर्वरकों और अन्य रसायनों का इस्तेमाल घटाया जा सके। कृषि और कृषक कल्याण मंत्रालय ने 16 सितंबर को जल संसाधन, नदी विकास और गंगा संरक्षण मंत्रालय के साथ एक समझौता किया। इसके तहत उत्तराखंड से पश्चिम बंगाल तक 1657 ग्राम पंचायतों के निवासियों को जैविक खेती के लिए प्रेरित किया जाएगा ताकि प्रदूषणकारी रसायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का इस्तेमाल कम कर गंगा की प्राचीन पवित्रता को बहाल किया जा सके।

गूगल टॉयलेट लोकेटर राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के लिए गूगल टॉयलट लोकेटर शुरू किया जाएगा जो उपयोग हेतु नजदीकी शौचालय को ढूंढने में सहायता करेगा। शहरी विकास मंत्रालय ने सभी राज्य सरकारों और शहरी निकायों से स्वच्छता पखवाड़ा के अधीन शहरी क्षेत्रों में शौचालयों का गहन ऑडिट करने को भी कहा है जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे काम कर रहे हैं और पूर्ण उपयोग में लाए जा रहे हैं। राज्य और शहरी निकायों से कहा गया है कि पानी की उपलब्धता में कमी को दूर करते हुए आवासीय शौचालयों और सामुदायिक और आवासीय शौचालयों के संचालन का प्रभावी ऑडिट करने के लिए समुदाय प्रतिनिधियों से संपर्क किया जाए।

आगामी अंक

जनवरी, 2017 – पशुपालन

स्वच्छता सेनानी

केवल 25 दिनों में अटरू ब्लॉक हुआ खुले में शौचमुक्त

इस साल 2 अक्तूबर को गांधी जयंती के अवसर पर खुले में शौचरहित गांव बनने की हौड़ में राजस्थान में बारां जिले का अटरू ब्लॉक भी शामिल हो गया और जिले को केवल 25 दिनों की अवधि में खुले में शौच से मुक्त कर लिया गया। गांव के प्रधान और 30 पंचायतों के सरपंचों ने गांवों को खुले में शौचमुक्त बनाने के प्रयासों में तेजी लाने के लिए 30 दिन तक दिन में केवल एक समय भोजन लेने का व्रत ले लिया। वे इस बात से आश्वस्त थे कि गांव को शौचमुक्त बनाने के उनके प्रयासों में तेजी लाने के लिए यह एक प्रभावी तरीका होगा और वास्तव में यह सच साबित हुआ।

ब्लॉक अटरू को ओडीएफ करने के लिए विकास अधिकारी द्वारा गांवो में चौपाल लगाकर ग्रामीणो को जल्द शौचालय बनाने के लिए प्रेरित करते हुए।

बारां जिले की जिला परिषद् के सीईओ गवती प्रसाद कलाल का मानना था कि गांधीजी ने तो कई सामाजिक बुराइयों और अन्याय के खिलाफ अहिंसक लड़ाई लड़ी थी तो उनके सम्मान में वे भी इस अहिंसक तरीके से खुले में शौच के खिलाफ लड़ाई लड़ेंगे।

एक सितंबर से शुरू इस कवायद में जिला प्रशासन ने प्रधान, सरपंच, ग्रामसेवक, शिक्षक, स्कूलों और आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं, सरकारी अधिकारियों और राशन की दुकानों के डीलरों के साथ, जिनका लोगों से सीधा संपर्क रहता है, विभिन्न बैठकों का आयोजन किया। बहुत विवेचना के बाद, ब्लॉक और पंचायत प्रमुखों ने 14 सितंबर को यह फैसला लिया कि जब तक उनके गांवों में सभी लोग शौचालय का इस्तेमाल करना शुरू नहीं करेंगे तब तक वे केवल दिन में एक वक्त ही भोजन ग्रहण करेंगे।

सीईओ के अनुसार इसके परिणाम अनुमान से कही बेहतर रहे। शुरू में लोग हैरान थे, और फिर वे इस मुद्दे की गंभीरता को समझने लगे। इसके बाद निर्माण गतिविधियां काफी तेज गति से शुरू हुई। सरपंचों ने परिवारों को वित्तीय सहायता के साथ निर्माण सामग्री प्रदान की। बारिश की वजह से काम में देरी न हो इससे बचने के लिए ईंटों को लाने के लिए बैलगाड़ियों का इस्तेमाल किया गया। शौचालयों के निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री को उनके घरों में ही रखा गया।

ग्रामीणो को शौचालय बनाने के लिए प्रभात फैरी का आयोजन करती हुए ब्लॉक एवं पंचायत स्तरीय टीम

इसके अलावा, छात्रों और शिक्षकों के अभियान के समर्थन में खड़े होने से इस आंदोलन को और मजबूती मिली। वे लोगों को समझाने के लिए घर–घर गए और इसके सुखद परिणाम सामने आए।

धीरे–धीरे गांव को खुले में शौचमुक्त बनाने की इस मुहीम में सभी शामिल हो गए और यह एक जन–आंदोलन बन गया। अभियान के प्रभाव का अनुमान इस बात से ही लगाया जा सकता है कि जहां एक सितंबर से पहले केवल 5 ओडीएफ पंचायतें थी वहीं सिर्फ 25 दिनों में शेष 30 पंचायतें खुले में शौचमुक्त हो गई। मुख्य कार्यकारी अधिकारी ने बताया कि अब अटरू ब्लॉक पूरी तरह ओडीएफ बन गया है।

भ्रष्टाचार एवं काला धन मिटाने का ऐतिहासिक कदम

भ्रष्टाचार, काले धन, काले धन को सफेद बनाने के गोरखधंधे, आतंकवाद और आतंकवाद को मिलने वाली वित्तीय मदद और नकली नोटों का खत्मा करने के लिए भारत सरकार ने ऐतिहासिक कदम उठाते हुए 8 नवंबर, 2016 को बड़े पैमाने पर विमुद्रीकरण की घोषणा कर दी। राष्ट्र के नाम संबोधन में प्रधानमंत्री ने ऐलान किया कि 500 और 1,000 रुपये के नोट अमान्य हो जाएंगे और 500 तथा 2,000 रुपये के नए नोट जारी किए जाएंगे।

इस कदम के मुख्य प्रावधान हैं:

- 500 और 1,000 रुपये के नोटों की कानूनी मान्यता 8 नवंबर, 2016 की मध्यरात्रि से समाप्त हो गई है।
- 500 और 1,000 रुपये के पुराने नोटों को कितनी भी संख्या में 10 नवंबर से 30 दिसंबर, 2016 तक बैंकों और डाकघरों में जमा करने की अनुमति दी गई।
- बैंकों से प्रतिदिन 10,000 रुपये और सप्ताह में अधिकतम 20,000 रुपये की अधिकतम नकदी निकासी सीमा तय की गई। 14 नवंबर से इसे बढ़ाकर 24,000 रुपये कर दिया गया और 10,000 रुपये की निकासी सीमा भी समाप्त कर दी गई।
- वैध पहचान प्रमाणपत्र होने पर बैंकों, मुख्य डाकघरों तथा उप–डाकघरों में 500 और 1,000 रुपये के पुराने नोटों को बदलने की सुविधा दी गई। नोट बदलने के लिए 24 नवंबर, 2016 तक 4,000 रुपये (जिसे बाद में 4,500 रुपये और फिर 2,000 रुपये प्रति व्यक्ति कर दिया गया) की सीमा तय की गई।
- एटीएम से निकासी की सीमा 2,000 रुपये कर दी गई, जिसे बाद में बढ़ाकर 2,500 रुपये कर दिया गया।
- चेक, डिमांड ड्राफ्ट, डेबिट या क्रेडिट कार्ड और इलेक्ट्रॉनिक लेनदेन पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं है।
- सरकारी अस्पतालों, सरकारी अस्पतालों की फार्मेसी में (डॉक्टर के पर्चे के साथ), रेलवे की टिकट खिड़की, सरकारी बसों, हवाई टिकट के काउंटर, सरकारी तेल कंपनियों के पेट्रोल, डीजल और गैस पंपों पर, राज्य अथवा केंद्र सरकार के उपभोक्ता सहकारी भंडारों, राज्य सरकार के मिल्क बूथ और श्मशान गृहों तथा कब्रिस्तानों में मानवीय आधार पर 500 और 1,000 रुपये के नोट स्वीकार किए गए।
- बाद में (15 नवंबर को) निर्णय लिया गया कि काउंटर पर जाकर 500 और 1,000 रुपये के नोटों की बदली कराने पर चुनावों के दौरान इस्तेमाल होने वाली अमिट स्याही लगाई जाएगी ताकि इस सुविधा का दुरुपयोग नहीं हो और भारी संख्या में लोगों के पास नकदी पहुंच सके। परिवारों को विवाह के लिए माता अथवा पिता में से किसी भी एक के खाते से 2.5 लाख रुपये तक निकालने की अनुमति दे दी गई (शर्तों सहित)।
- केंद्र सरकार के ग्रुप 'सी' तक के कर्मचारियों को अग्रिम वेतन के रूप में 10,000 रुपये तक नकद दिए गए, जिसे उनके नवंबर के वेतन में समायोजित कर लिया जाएगा।
- किसान अपने केवाईसी खातों से 25,000 रुपये प्रति सप्ताह तक निकाल सकते हैं। इसमें ऋण की सामान्य सीमाएं एवं शर्तें लागू होंगी। यह सुविधा किसान क्रेडिट कार्ड पर भी लागू होगी।
- किसान खरीफ सत्र के अपने उत्पाद फिलहाल एपीएमसी बाजार में बेच रहे हैं। चेक/आरटीजीएस के जरिए अपने बैंक खातों में भुगतान प्राप्त करने वाले किसानों को 25,000 रुपये प्रति सप्ताह तक नकद निकासी की अनुमति है।
- रबी सत्र के दौरान किसानों को सहूलियत देने के लिए सरकार किसानों को पहचान का प्रमाण दिखाकर केंद्र तथा राज्य सरकारों, सार्वजनिक उपक्रमों, राष्ट्रीय अथवा राज्य बीज निगमों, केंद्रीय अथवा राज्य विश्वविद्यालयों एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) के केंद्रों, इकाइयों अथवा भंडारों से 500 रुपये के पुराने नोट देकर खरीद की अनुमति देगी।

ये कदम काले धन की समस्या से निपटने के सरकार के उपायों की शृंखला में ही हैं। वर्तमान सरकार का सबसे पहला निर्णय काले धन पर विशेष जांच दल (एसआईटी) का गठन था। विदेशी बैंक खातों के खुलासे पर एक कानून 2015 में पारित किया गया। अगस्त 2016 में बेनामी लेनदेन कम करने के लिए सख्त नियम लागू किए गए। इसी दौरान काले धन के खुलासे की योजना भी लाई गई। पिछले ढाई वर्ष में 1.25 लाख करोड़ रुपये से अधिक के काले धन का खुलासा हुआ है।

(स्रोतः पीआईबी और वित्त मंत्रालय की वेबसाइट (23 नवंबर, 2016 तक अद्यतन)

आर. एन. आई./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)-05/3164/2015-17
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-54/2015-17
1 दिसंबर 2016 को प्रकाशित एवं 5-6 दिसंबर 2016 को डाक द्वारा जारी

R.N.I/708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2015-17
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-54/2015-17
to Post without pre-payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रकः डॉ. साधना राउत, अपर महानिदेशक एवं प्रभारी, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : जे.के. ऑफसेट, बी-278, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110020, संपादकः ललिता खुराना